प्रकरण तैंतीस

‘‘बहुत कार्य करना शेष है’’

इन्दौर
दिसम्बर ३, १९७०

प्रभुपाद के शिष्यों के लिए भारत एक स्वप्न-सा बना रहा; जब रेलगाड़ी भारत की अपरिचित देहाती दुनिया से गुजर रही थी, तो वे खिड़कियों से बाहर निहार रहे थे।

रेलवे लाइन के आसपास की झाड़ियों में पीले फूल लगे थे। मील पर मील सिंचित खेत निकलते गये—गेहूँ, धान, गन्ना, तरह-तरह की दालों के खेत। छोटे गाँव, मिट्टी की दीवारों से बने घर जिनके ऊपर फूस की छतें थीं, या घासफूस की दीवारों से बने घर जिनके ऊपर खपरैल की छतें थीं, शान्त भाव से दृष्टि से ओझल होते गये। कहीं-कहीं पत्थर से बना गाँव का मन्दिर चारों ओर की सादा संरचनाओं के ऊपर सिर उठाए दिखाई देता। चक्करदार सरिताओं के घास-युक्त किनारों पर चरवाहे हाथ में डंडे लिए पशुओं को चरा रहे थे। चरती गाएं, पुराने खेतों में हल खींचते बैल, ईंधन के लिए धूप में सूखते गोबर के उपले, चूल्हों से उठता धुआँ, गरम धरती की गंध—ये सब उस शान्त सरल जीवन के अंग थे, जिन्हें प्रभुपाद के संसर्ग के कारण भक्तजन पसन्द करने लगे थे।

प्रभुपाद और उनके शिष्य इन्दौर जा रहे थे, जो ४७५,००० जनसंख्या का नगर था, भारत के मध्यप्रदेश के मध्य में स्थित था और बम्बई के उत्तर-पूर्व में तेरह घंटे की यात्रा की दूरी पर था। *भगवद्गीता* की शिक्षाओं का समारोह मनाने वाले गीता जयंती महोत्सव के निर्देशकों ने प्रभुपाद और उनके शिष्यों को अपने समारोह और सार्वजनिक सभा में सम्मिलित होने के लिए आंमत्रित किया था।

• • •

इन्दौर में श्रील प्रभुपाद और उनके शिष्य गीता जयन्ती महोत्सव के लिए निर्धारित स्थान गीताभवन, के निकट के आवासों में ठहर गये। समारोह के निर्देशकों ने प्रभुपाद को एक बंगले में ठहराया जो लान और बगीचे से युक्त था और उनके शिष्यों को पास में ही

आबास प्रदान किया।

भक्तों ने गीताभवन के चारों ओर घूमकर देखा कि महोत्सव में भाग लेने के लिए भारत के विभिन्न भागों से बहुत-से स्वामी और साधु आये थे। उनकी दृष्टि बड़े पंडाल और रंगमंच पर, गीताभवन द्वारा संचालित नेत्र-चिकित्सालय पर और चित्रावली के नक्शे पर गई। चित्रावली को आध्यात्मिक मार्गों का व्यावहारिक मिश्रण माना जाता था। प्रभुपाद उनका उल्लेख प्राय: 'खिचड़ी' कहकर किया करते थे। उसमें कृष्ण, बुद्ध, ईसा मसीह, विवेकानंद, रामकृष्ण तथा देवता और पशु सभी प्रदर्शित किये गये थे। ऐसी चित्रावली के आयोजन में लगाई गई शक्ति और कल्पना की प्रशंसा करते हुए भी भक्तों ने उसकी उपयोगिता के विषय में अपना सन्देह व्यक्त किया।

उत्सव के पहले दिन बोलने वालों में प्रभुपाद का नाम अन्तिम था। उनके शिष्य, जो उनके साथ मंच पर बैठे थे, कई घंटों से चल रहे हिन्दी भाषणों से ऊब गये और बेचैनी का अनुभव करने लगे थे। और इस जानकारी से वह संध्या विशेष कष्टप्रद हो रही थी कि सभी भाषणकर्ता मायावादी भ्रांत धारणाओं को प्रस्तुत कर रहे थे। श्रील प्रभुपाद कठोर रूप धारण किये बैठे रहे और प्रतीक्षा करते रहे; उनका हाथ माला की थैली में था, सिर तना था, ओंठों से हरे कृष्ण मंत्र की मर्मर ध्वनि निकल रही थी।

अन्त में जब प्रभुपाद के बोलने का समय आया, तो उन्होंने इस व्याख्या के साथ आरम्भ किया कि पश्चिम में वे *गीता यथारूप* की शिक्षाओं का प्रचार कर रहे थे। उन्होंने कहा कि *भगवद्गीता* का सही बोध जैसाकि उसके मूल शिक्षार्थी अर्जुन ने समझा था, गुरु-परम्परा में ही हो सकता था। *गीता* कृष्ण के भक्त के लिए थी और अभक्तों द्वारा उसकी गलत व्याख्या नहीं होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि *गीता* की गलत व्याख्या करना धर्म के नाम में धोखा देना है। उन्होंने नकली अवतारों का भी जोरदार खंडन किया।

प्रभुपाद ने अपना भाषण समाप्त किया और शिष्यों से कीर्तन आरम्भ करने को कहा। वह सहज, भावविभोर कर देने वाली घटना थी और प्रभुपाद अपने शिष्यों के साथ मंच पर नाचने लगे। जन-समूह जीवन्त हो उठा और लय के साथ तालियाँ बजाने लगा। हंसदूत मृदंग बजाता हुआ मंच से नीचे कूद पड़ा और श्रोता-मंडली के सदस्यों को कीर्तन और नृत्य में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करने लगा। कई अन्य भक्त भी नीचे कूद पड़े, और शीघ्र ही सैकड़ों लोग झूमकर नाचने और तालियाँ बजाते हुए गाने लगे : हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। वास्तविक गीता जयंती महोत्सव यही था। कृष्ण के पवित्र नाम का गायन हो रहा था और हर एक प्रसन्नतापूर्वक कीर्तन में सम्मिलित था।

प्रभुपाद और उनके शिष्यों के कार्य से बहुत अधिक प्रसन्न होकर पंडाल के निर्देशक

अगले दिन प्रभुपाद से मिलने के लिए उनके बंगले पर गये। प्रभुपाद ने शिकायत की कि बोलने के लिए उन्हें इतनी लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ी थी। उनके शिष्यों को घंटों ऐसी भाषा में भाषण सुनने के लिए नहीं बैठाना चाहिए, जिसे वे नहीं समझते। जब प्रभुपाद ने बतलाया कि जो भाषण दिए गये थे वे *गीता* की शिक्षाओं से बहुत विलग थे, तो गीताभवन के डाइरेक्टरों ने उत्तर दिया, "हम किसी विशेष मार्ग के पक्ष में नहीं हैं। शंकर-मत के अनुयायी और अन्य लोग भी हमारी संस्था में आते हैं। हम पूर्णत: इस मत के नहीं हैं कि श्रीकृष्ण एक मात्र भगवान् या इस तरह के कुछ हैं। श्रीकृष्ण के पीछे कोई शक्ति है...।"

इस टिप्पणी से श्रील प्रभुपाद आग-बबूला हो उठे। *गीता* का यह कैसा महिमा-गान था, यदि भाषणकर्ता कृष्ण को उस रूप में नहीं स्वीकार करते, जिस रूप में *गीता* में वे व्याख्यायित हैं? *गीता* कृष्ण को सर्वोच्च सत्य घोषित करती है : *मत्त: परतरं नान्यत्।* प्रभुपाद ने गीताभवन के डाइरेक्टरों को उपदेश दिया कि वे *भगवद्गीता* का आशय समझें। डाइरेक्टरों ने अपना मत नहीं बदला, किन्तु वे इतनी समझ रखते थे कि वे जान गये कि प्रभुपाद एक महान् पंडित और संत थे और उन्होंने उनकी बात सम्मानपूर्वक सुनी। सिर हिलाते हुए उन्होंने कहा कि वे उनके दृष्टिकोण को स्वीकार करते थे।

डाइरेक्टरों के चले जाने के बाद भी प्रभुपाद कहते रहे, "वे सोचते हैं कि कृष्ण के परे भी कुछ है या कृष्ण के भीतर जो आत्मा है, उसके प्रति हमें समर्पण करना चाहिए। किन्तु वे नहीं जानते कि कृष्ण के भीतर और बाहर सब कुछ सम्पूर्ण, शाश्वत और आनन्दमय है।"

प्रभुपाद ने कहा कि वे समझ गये कि गीता जयंती महोत्सव के व्यवस्थापकों ने उन्हें अधिक भीड़ इकट्ठी करने के लिए आमंत्रित किया था। लेकिन वे उन्हें फिर ऐसी मायावादी बकवास सुनने के लिए बैठने को राजी नहीं कर सकते। भविष्य में वे अपने शिष्यों के साथ जायेंगे, भाषण करेंगे, कीर्तन करेंगे और चले आयेंगे।

लेकिन अगली रात फिर पंडाल के डाइरेक्टरों के वादों के बावजूद, श्रील प्रभुपाद को भाषण देने और कीर्तन करने के लिए कार्यक्रम के अन्त तक रुकना पड़ा। उस रात जन-समूह पहले से अधिक था; और स्पष्ट था कि वह प्रभुपाद और विदेशी साधुओं के लिए प्रतीक्षा कर रहा था। अन्त में जब प्रभुपाद की बारी आई, तो उन्होंने भाषण दिया और तब अपने शिष्यों को कीर्तन करने के लिए कहा।

कीर्तन के बीच गीताभवन के एक सदस्य ने भक्तों को संकेत किया कि पिछली रात की तरह वे जन-समूह में कूद पड़ें। किन्तु पिछली रात की स्वत: स्फूर्त घटना को केवल जन-समूह को प्रसन्न करने के लिए कृत्रिम रूप से दुहराया नहीं जा सकता था। लेकिन सदस्य का आग्रह बना रहा। वह आगे रंगमंच के किनारे गया और उस पर चढ़कर, नाचते

हुए भक्तों के पैर पकड़कर उन्हें श्रोता-मंडली के मध्य घसीटने की कोशिश करने लगा। भक्तों को चिढ़ हुई। अंधाधुंध पैरों को दबोचने में लगे उस व्यक्ति ने एक महिला की साड़ी खींच ली। श्रील प्रभुपाद भी नाच रहे थे, लेकिन जब उन्होंने यह देखा तो वे झपटकर रंगमंच के किनारे पहुँचे और अपने करतालों को उस व्यक्ति के मुँह की ओर ले जाते हुए चिल्लाकर बोले, "इसे बन्द करो।" वह व्यक्ति पीछे हट गया, और प्रभुपाद और उनके शिष्य कीर्तन करते रहे। यद्यपि उपस्थित जनसमूह ने इसे नहीं देखा था, प्रभुपाद की सिंह-गर्जना से उनके शिष्य चकित रह गये।

उत्सव के डाइरेक्टरों को इस बार भी प्रभुपाद के भाषण और कीर्तन से प्रसन्नता हुई। किन्तु प्रभुपाद ने कहला दिया कि वे अन्य लोगों के भाषण सुनते हुए अपनी बारी की प्रतीक्षा में वे और नहीं बैठे रहेंगे। वे *भगवद्गीता* पर ऐसी सम्मितियाँ सुन-सुनकर ऊब गये थे, जो *भगवद्गीता* के इस उपदेश से वंचित थीं कि—परम सत्य श्रीकृष्ण के प्रति समर्पित हो। कुछ वक्ताओं ने *गीता* को एक रूपक बताया, कुछ ने कहा कि कृष्ण वास्तव में कोई ऐतिहासिक महापुरुष नहीं थे, और कुछ ने *गीता* की लोकप्रियता का लाभ उठाकर केवल अपनी निजी राजनैतिक और सामाजिक विचारधाराओं को सामने रखा। प्रभुपाद ने कहा कि जो व्यक्ति अपनी विचारधारा रखता है, उसे अपनी पुस्तक अलग से लिखनी चाहिए और *भगवद्गीता* को, जो लाखों-करोड़ों की धर्म-पुस्तक थी और सारे संसार में सम्मानित थी, अपने विचारों का माध्यम नहीं बनाना चाहिए। ऐसी सभा को जिसका नाम गीता जयंती हो, तरह-तरह के दार्शनिक विचारों को प्रकट करने का मंच क्यों बनाया जाना चाहिए? *भगवद्गीता* का कथन है कि *गीता* स्वयं ज्ञान का सारांश है, जिसका उद्देश्य सम्पूर्ण संसार का कल्याण करना है। अतः *गीता* की गलत व्याख्या सबसे बड़ा अनर्थ है। प्रभुपाद को लगा कि ऐसे कार्यक्रम के मध्य बैठकर वे और उनके शिष्य मौन रूप से ईश-निन्दापूर्ण भाषणों का समर्थन कर रहे थे।

उत्सव की तीसरी रात में प्रभुपाद और उनके शिष्य मंच पर पहले ही पहुँच गये, क्योंकि उत्सव के निर्देशकों ने उनसे वादा किया था कि उनका कार्यक्रम सब से पहले होगा। लेकिन जब एक अन्य वक्ता खड़ा हुआ और भाषण देने लगा तो प्रभुपाद और उनके शिष्य मंच से चले गये। उत्सव का निर्देशक इससे बहुत क्षुब्ध हुआ, क्योंकि श्रोताओं में से अधिकतर लोग विशेषकर कीर्तन के लिए आये थे। उसने प्रभुपाद से रुकने का आग्रह किया, पर प्रभुपाद ने इनकार कर दिया। लेकिन वे इसके लिए राजी हो गये कि हर रात वे अपने शिष्यों को भेजेंगे, जो भाषण देंगे और कीर्तन करेंगे।

• • •

श्रील प्रभुपाद के शिष्यों को इन्दौर में सवेरे की *भागवतम्* कक्षाएँ विशेष रूप में रुचिकर लगीं। न केवल प्रतिवेश आत्मीय था—जिसमें दस भक्त प्रभुपाद के कमरे में उनके निकट बैठते थे—वरन् *भागवत्* की कथा भी ऐसी रहस्यमय थी, जैसी उन्होंने पहले कभी नहीं सुनी थी।

"हम अजामिल के विषय में बात कर रहे हैं, जो एक ब्राह्मण था और कान्यकुब्ज में रहता था, जिसे वर्तमान काल में कानपुर कहते हैं।" प्रभुपाद ने आरम्भ किया और उन्होंने अजामिल की जीवन-कहानी का वर्णन किया। बीच-बीच में रुककर वे संस्कृत-श्लोक पढ़ते थे या कहानी का विस्तार और उससे मिलने वाली शिक्षाओं को बताते थे। युवा ब्राह्मण अजामिल ने धार्मिक सिद्धान्तों का दृढ़ता से पालन किया था, जब तक कि वह एक वेश्या पर मुग्ध नहीं हो गया। व्याख्यान देते समय प्रभुपाद की दृष्टि गीता जयन्ती महोत्सव के नकली भाषणकर्ताओं पर थी।

"बहुत-सी चीजें जानने की हैं, परन्तु उन चीजों पर यहाँ कोई विचार नहीं हो रहा है। सब कुछ बहुत आसान है। जो कुछ भी आप करना चाहें—आप केवल चिन्तन करें और आप ईश्वर बन जायेंगे। संसार-भर में इस तरह की बहुत धोखाधड़ी चल रही है। तथाकथित योगी कहते हैं—'आप चिन्तन करें और ज्यों ही आपको आत्मोपलब्धि होती है, आप ईश्वर बन जाते हैं।"

"*भगवद्गीता* की व्याख्या भिन्न-भिन्न तरह से की जा रही है। और ये तथाकथित व्याख्याएँ निरीह जनता द्वारा प्रामाणिक ज्ञान के रूप में स्वीकार की जा रही हैं। कोई व्याख्या कर रहा है कि कुरुक्षेत्र का अर्थ यह शरीर है और पंच-पांडव का अर्थ इन्द्रियाँ है। लेकिन यह कोई व्याख्या नहीं हैं। आप *भगवद्गीता यथारूप* की व्याख्या कैसे कर सकते है, जब आप उसे समझते नहीं? ऐसा प्रयत्न व्यर्थ है।"

अपने दूसरे भाषण में प्रभुपाद ने अजामिल के जीवन के आगे का हाल बताया: उसका अपनी पतिव्रता स्त्री को छोड़कर वेश्या के साथ रहना, अवैध तरीकों से उसका भरण-पोषण करना; उससे दस संतानें पैदा करना, और इस तरह जीवन के अस्सीवें वर्ष तक पापमय ढंग से रहना। प्रभुपाद ने कहा कि यह कहानी हजारों वर्ष पूर्व घटित हुई थी। "उस समय केवल एक अजामिल था, परन्तु वर्तमान काल में तुम बहुत-से अजामिलों को पाओगे, क्योंकि यह कलियुग है।"

"अजामिल अपने सबसे छोटे पुत्र नारायण को बहुत प्यार करता था। जब अजामिल अपनी मृत्यु-शैया पर पड़ा था और उसने जब यम के दूतों को अपने निकट आते देखा, तब वह अपने पुत्र 'नारायण' का नाम लेकर चिल्लाया।" प्रभुपाद ने कहानी को जारी रखा।

"वह मरने ही वाला था, इसलिए—स्वाभाविक था कि पुत्र के प्रति प्रेम होने के

कारण वह उसे बुला रहा था 'नारायण! नारायण! नारायण! यहाँ आओ, यहाँ आओ।' यह स्वाभाविक है। जब मेरे पिता मर रहे थे उस समय का मुझे भी स्मरण है। मैं घर पर नहीं था। इसलिए वे मुझे देखने के लिए एक दिन जीवित रहे थे। वे हमेशा पूछा करते थे कि क्या अभय वापस आ गया। ऐसा होता है। पिता का पुत्र के प्रति प्रेम ऐसा ही होता है। सो, अजामिल पुकार रहा था 'नारायण' 'नारायण!'

'नारायण' कृष्ण का भी एक नाम है। और प्रभुपाद ने बताया कि भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण के सच्चे भक्त पाँच-पांडव भाइयों की चर्चा आई है। वे कुरुक्षेत्र के युद्ध के विजेता थे।

भगवद्गीता के अनुसार यदि कोई व्यक्ति मरते समय नारायण या कृष्ण का स्मरण करता है, तो वह मुक्त हो जाता है। किसी का मृत्यु के समय जो मनोभाव होता है, उससे उसके अगले जन्म का निर्णय होता है। क्योंकि भक्त कृष्ण-चेतन होता है, वह मृत्यु के बाद आध्यात्मिक लोक में प्रवेश करता है और क्योंकि भौतिकतावादी इन्द्रियों के सुख और मानसिक ऊहापोह में लिप्त होता है, वह मृत्यु के उपरान्त भौतिक जगत में बार-बार जन्म लेता है। प्रभुपाद ने एक दृष्टान्त दिया।

"कलकत्ता के एक सज्जन बड़े व्यवसायी थे। वे शेयरों के क्रय-विक्रय का व्यवसाय करते थे। अतएव मृत्यु के समय वे चिल्ला रहे थे, 'कमरहटी, कमरहटी'। इसका परिणाम यह हो सकता था कि उन्होंने कमरहटी मिल में एक चूहे के रूप में जन्म लिया हो। यह सम्भव है। मृत्यु के समय तुम्हारी जो भावना होती है, वह तुम्हें उसी तरह की अगली देह में ले जाती है।"

चूँकि अजामिल के मुख से भगवान् का नाम निकला था, यद्यपि वस्तुतः वह अपने पुत्र को बुला रहा था, इसलिए वह सभी पापों से मुक्त हो गया। तब भी उसके पापमय जीवन के कारण यमराज के दूत उसे दण्ड देने के लिए ले जाने को प्रकट हुए थे।

"जब अजामिल मर रहा था, तो उसने देखा कि उसके सामने तीन भयानक व्यक्ति, बहुत डरावने व्यक्ति, हाथ में रस्सियाँ लिए खड़े थे। कभी कभी मृत्यु को प्राप्त होने वाला व्यक्ति चिल्लाने लगता है, क्योंकि वह देखता है कि उसे यमराज के यहाँ ले जाने के लिए कोई आया है। उसे यह दिखाई देता है और वह भयभीत हो जाता है। अजामिल भी भयभीत हो गया था। यमराज के दूतों के बाल बहुत घुंघराले होते हैं और उनके शरीर के रोंगटे खड़े होते हैं। तो अजामिल की मृत्यु के समय यमराज के दूत उसे लेने आये।"

प्रभुपाद रुक गये। "हम फिर कभी आगे विचार करेंगे।" और उन्होंने अपना भाषण समाप्त कर दिया।

• • •

इन्दौर में प्रभुपाद लोगों को आजीवन सदस्य बनाने में लग लए, इसके लिए वे हंसदूत को अकेले बाहर भेजने लगे। हंसदूत अनुभवहीन था और उसे सन्देह भी था कि कोई १,१११ रुपए देगा।

हंसदूत : *एक दिन प्रभुपाद ने मुझसे एक पड़ोसी के साथ बाजार में जाने को कहा। उन्होंने कृष्ण पर तीन पुस्तकें ले जाने को और कुछ आजीवन सदस्य बनाने के लिए प्रयास करने को कहा। वे बोले कि इन पुस्तकों को दिखाना और कहना कि ये हमारे कार्य का नमूना है। तब प्रार्थना करना कि १,१११ रुपए का आजीवन सदस्य बनकर कृपया हमारे कार्य में सहायता कीजिए। मैं सोचने लगा कि दो या तीन पुस्तकों के लिए कोई भी एक हजार रुपए देने को राजी नहीं होगा। इसलिए मैंने इनके बारे में कुछ भी नहीं किया। मैं इस काम से बचने लगा। अगले दिन प्रभुपाद ने मुझे फिर वही आदेश दिया, लेकिन मैंने फिर कुछ नहीं किया। तीसरे दिन उन्होंने कहा कि मुझे जाना है, इसलिए मैं पड़ोस में गया और एक आदमी को लिया, जो मुझे कपड़े के व्यापारियों के पास ले गया।*

हम इन्दौर के सबसे बड़े कपड़े के व्यापारी के पास गये। वह अंग्रेजी नहीं जानता था, इसलिए जो पड़ोसी मेरे साथ गया था, वह अनुवाद करने लगा। मैं कहता, "उससे यह कहो, वह कहो।" वह पड़ोसी हर चीज का अनुवाद करने लगा। जब मैं अपनी पूरी बात कह चुका तो मैं बोला, "अब उससे, १,१११ रुपए का चेक देने को कहो।" मेरे अनुवादक ने यह सन्देश उस व्यक्ति तक पहुँचाया और उसने झट अपनी चेक बुक निकालकर चेक काट दिया।

तब हम दूसरे व्यापारी के पास गये और वहाँ भी वही हुआ—उसने तुरन्त चेक काट दिया। हम तीसरे व्यक्ति के पास गये और वह भी आजीवन सदस्य बन गया। इस तरह पहले ही दिन मैंने तीन आजीवन सदस्य बनाये और जब वापस जाकर मैंने प्रभुपाद को इसके बारे में बताया तो वे भावविभोर हो गये।

शिष्यों को भेजकर और कभी-कभी स्वयं बाहर जाकर प्रभुपाद ने इन्दौर में शीघ्र इस्कान के एक दर्जन आजीवन सदस्य बना लिए। प्रभुपाद, हंसदूत और गिरिराज इन्दौर के राजा के पास गये और उनसे आजीवन सदस्य बनने की प्रार्थना की, पर राजा ने इनकार कर दिया। भक्तों को निराशा हुई, और गीताभवन को वापस लौटते समय, कार में हंसदूत ने प्रभुपाद से पूछा, "क्या पुस्तकों के सम्बन्ध में मैंने ठीक कहा था?"

"मेरी पुस्तकें सोना-तुल्य है," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "तुम उनके बारे में जो कुछ भी कहो, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता; जो उनका मूल्य समझता है, वह उन्हें खरीदेगा।"

• • •

चूँकि अभ्यागतों द्वारा प्रभुपाद और उनके शिष्यों से प्रायः पूछा जाता था कि विभिन्न लोकप्रिय आध्यात्मिक उपदेशकों के बारे में वे क्या सोचते थे, इसलिए प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने के लिए संकेत-बिन्दु दिए। यदि उपदेशक वैदिक शास्त्रों का सच्चा अनुयायी न हो, तो प्रभुपाद ने बताया, उनके शिष्य को उत्तर देना चाहिए, "कौन से स्वामी ?" इस प्रकार यह संकेत देने से कि शिष्य ने ऐसे किसी उपदेशक के बारे में सुना ही नहीं था, वह ऐसे उपदेशक के महत्त्व को कम कर देगा। तदनन्तर शिष्य को पूछना चाहिए, "इस उपदेशक का दार्शनिक मत क्या है ?" जब इसका उत्तर मिले तो शिष्य उस विशेष दार्शनिक मत का, उसके व्याख्याता की आलोचना किये बिना ही खंडन कर सकता था।

प्रभुपाद ने बताया कि भारत में मायावादी गुरुओं की संख्या बहुत थी, और वे प्रायः दल बनाकर एक समारोह से दूसरे समारोह में जाया करते थे। उनमें से हर एक का अपना विशेष ढंग होता था, पर उनकी मूलभूत रुचि चपातियों में होती थी। "और हर चपाती के लिए," प्रभुपाद ने कहा, "बहुत-से मायावादी हैं। इसलिए उनमें होड़ है।"

• • •

प्रभुपाद को प्रायः मिलने वालों में से एक वैरागी बाबा थे; वे एक शिक्षित व्यक्ति थे, जो अमेरिका हो आये थे और धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलते थे। वे नियमित रूप से भक्तों के साथ कीर्तन में सम्मिलित होते थे, उनके साथ मंच पर जाते और नाचते थे, और जब वे प्रभुपाद से उनके कमरे में मिलते थे, तो प्रभुपाद के साथ उनका व्यवहार परिचित जैसा होता था; प्रभुपाद के शिष्यों की राय में बहुत अधिक परिचित जैसा। किन्तु प्रभुपाद उसे सहन करते थे।

एक दिन कुछ भक्तों की वैरागी बाबा से भेंट एक जगह दोपहर के खाने पर हुई और उन्होंने देखा कि वे चाय पी रहे थे। एक भक्त ने सहज ढंग से, लेकिन चुनौती के ढंग से उनसे पूछा कि वे चाय क्यों पी रहे थे। "ओह, मैं एक अवधूत हूँ," वैरागी बाबा ने उत्तर दिया। भक्तों ने इस शब्द को पहले कभी नहीं सुना था; उन्होंने इस घटना का वर्णन प्रभुपाद से किया। "अवधूत," प्रभुपाद ने व्याख्या की, "का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो विधि-विधानों से परे हो। सामान्य रूप से इससे नित्यानन्द प्रभु का निर्देश होता है।" (भगवान् कृष्ण का एक अवतार जिन्होंने भगवान् चैतन्य के साथ जन्म लिया, हरे कृष्ण कीर्तन का प्रसार करने और इस युग की पतित आत्माओं का उद्धार करने के लिए। अपने नितान्त स्वच्छन्द कार्यकलापों के कारण, जिन पर मानव-जाति के विधि-विधानों का कोई अंकुश नहीं था, वे अवधूत रूप में विख्यात हो गये। भक्त उनकी असाधारण लीलाओं का आनन्द

लेते हैं, किन्तु उनका अनुकरण नहीं करते।) प्रभुपाद ने वैरागी बाबा के चायपान को और उनका अपने आपको अवधूत कहने को अनुचित बताया।

• • •

एक दिन तीसरे पहर भक्तों का एक दल प्रभुपाद के साथ उनके कमरे में बैठा था। "श्रीमती राधाराणी का सर्वश्रेष्ठ गुण पाक-विद्या में उनकी निपुणता था," प्रभुपाद ने कहा, "वे गा और नाच भी सकती थीं। किन्तु उनकी सबसे बड़ी सेवा कृष्ण के लिए भोजन बनाना था। माँ यशोदा उनसे कहतीं कि वे स्वयं कृष्ण और उनके सखा गोपों के लिए भोजन बनाएँ। इसलिए वे उन्हें एक साथ पंक्ति में बैठाकर प्रसाद खिलाती थीं।"

एक स्त्री दरवाजे पर आई, वह भेंट में चिड़वा लाई थी—भुने हुए काजू, आलू और किशमिश, मसालों के साथ पकाए हुए। कुछ प्रभुपाद ने लिया और शेष को उसने शिष्यों में बाँट दिया। "क्या तुम्हें यह पसन्द है?" यमुना की ओर मुड़ते हुए प्रभुपाद ने पूछा।

"ओह, यह बहुत स्वादिष्ट है," उसने उत्तर दिया।

"हाँ," उन्होंने कहा, "तुम्हें चाहिए कि इसे बनाना सीखो। मुझे यह बहुत पसन्द है। मेरे गुरु महाराज भी आलू का चिड़वा बहुत पसन्द करते थे, और वे कभी-कभी इसे तीसरे पहर शाम को माँगते थे। वे इसे बहुत पसन्द करते थे।" "श्रील प्रभुपाद," एक भक्त ने पूछा, "क्या हम आपका बिना तिलक का चित्र छाप सकते हैं?"

"हाँ," उन्होंने कहा, "मेरे गुरु महाराज का बिना तिलक का चित्र मिलता है। तुमने उनका वह चित्र देखा है, जिसमें वे अपने काम की मेज पर पुस्तकों से ऊपर सिर किये देख रहे हैं?"

"हाँ," भक्त ने उत्तर दिया, "मैंने वह चित्र देखा है। मैंने आपको उसी तरह, उसी मुद्रा में देखा है, जैसे आपके गुरु महाराज चित्र में दिखाई देते हैं।"

"तुमने केवल चमक देखी है," प्रभुपाद ने शिष्य की बात को सही करते हुए कहा, "गुरु महाराज सोना है। मैं केवल लोहा हूँ। लोहा कभी भी सोना नहीं हो सकता। किन्तु तुमने असली सोने की चमक देखी है।"

• • •

एक दिन तीसरे पहर एक प्रसिद्ध ज्योतिषी प्रभुपाद के पास आया और उनका हाथ देखने को कहा। "नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, " मेरा काम हो चुका है। किन्तु आप मेरे शिष्यों के हाथ देख सकते हैं।" ज्योतिषी ने उस समय वहाँ उपस्थित बहुत-से शिष्यों के हाथ देखे, उनका भविष्य बताया और वह चला गया। भक्त प्रभुपाद की ओर मुड़े और

जानना चाहा कि वे क्या समझें। "अर्चाविग्रह की आरती करते समय ज्योंही तुम अपनी तालियाँ बजाओगे," प्रभुपाद ने मुसकराते हुए कहा, "त्योंही तुम्हारें हाथों की रेखाएँ बदल जायेंगी।"

• • •

प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को एक कहानी उस समय की सुनाई, जब वे वृन्दावन में रहते थे। एक बंगाली विधवा प्रतिदिन सवेरे यमुना में स्नान करने जाया करती थी। और हर सवेरे वह बिना नागा एक लोटा जल राधा-दामोदर पुजारियों के लिए ले जाती थी, ताकि वे अर्चाविग्रहों को स्नान करा सकें। प्रभुपाद ने कहा कि कभी-कभी वे उस विधवा के लिए स्वयं दरवाजा खोलते थे, क्योंकि वे बहुत सवेरे उठ जाते थे। और वह विधवा अन्दर जाती थी और पुजारीयों को जगाती थी।

"यद्यपि जाड़े में वृन्दावन में रात में ठंडक हो जाती है," प्रभुपाद ने कहा, "पर वह विधवा जल लेकर आने में कभी भी नागा नहीं करती थी। अपने इस कार्य के कारण वह ईश्वर को प्राप्त करेगी। जो प्रतिदिन बहुत सवेरे नहीं उठ सकता, वह आध्यात्मिक जीवन के प्रति अधिक निष्ठावान् नहीं हो सकता। हर एक को ब्रह्म-मुर्हूत के पहले उठ जाना चाहिए—यह बहुत शुभ है। और जो व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन के प्रति निष्ठा रखता है, वह जरूर ऐसा करेगा।"

• • •

एक दिन प्रभुपाद माला फेरते हुए अपने बंगले के निकट बाहर बैठे हुए थे कि एक अज्ञात व्यक्ति कृष्ण के विभिन्न नाम पुकारता हुआ वहाँ पहुँचा। अचानक वह पृथ्वी पर गिरकर लोटने और चिल्लाने लगा। लगता था कि वह भावविभोर था। प्रभुपाद बैठे रहकर यह प्रदर्शन देखते रहे; उन्होंने कुछ नहीं किया। वह व्यक्ति चिल्लाता, लोटता और कृष्ण के नाम पुकारता रहा; प्रभुपाद अब उसकी ओर से पूर्ण उदासीन हो गये। कई मिनटों के बाद वह व्यक्ति उठा और चला गया; स्पष्टत: उसे निराशा हुई थी।

• • •

एक दिन बहुत सवेरे प्रभुपाद अपने शिष्यों के साथ अपने कमरे में बैठे थे कि एक सज्जन वहाँ आये और अश्रुपूर्ण नेत्रों से बोले कि उनकी माँ मर रही थी। भक्तों ने प्रभुपाद की ओर देखा और पाया कि वे गम्भीर बने हैं। उन्होंने न तो उन सज्जन को ढाढ़स दिया न उपदेश, वरन् एक हल्की-सी टिप्पणी की। प्रभुपाद के बारे में पहले से कुछ कहना

मुश्किल था। वे सदैव कृष्ण-चेतनायुक्त थे और गुरु और शास्त्र के अनुसार व्यवहार करते थे। लेकिन एक परिस्थिति-विशेष में उनका व्यवहार कैसा होगा, यह पहले से बताना असम्भव था। परन्तु वे जो कुछ भी करते थे, वह कृष्ण-चेतनामय और सही था, और वे अपने शिष्यों को अपना दृष्टान्त उपस्थित करके शिक्षा देते थे।

• • •

इन्दौर के आखिरी दिन सवेरे प्रभुपाद ने अजामिल की कहानी को जारी रखा। उन्होंने बताया कि चूँकि अजामिल ने भगवान् के पवित्र नाम का उच्चारण किया था, इसलिए उसने तत्काल मुक्ति पा ली, यद्यपि उसका जीवन इतना पापमय था।

"तो, अजामिल ने अपनी मृत्यु के समय केवल अपने पुत्र का स्मरण किया, जिसका नाम नारायण था। नारायण नाममात्र में श्री भगवान् नारायण की पूरी शक्ति निहित है। नाम संकीर्तन आन्दोलन का यही रहस्य है। नारायण के पवित्र नाम का कीर्तन करने पर आप तुरन्त श्री भगवान् के संसर्ग में आ जाते हैं। भगवान् का नाम भौतिक नहीं है—वह आध्यात्मिक है। कृष्ण और कृष्ण के नाम में कोई अन्तर नहीं है...।

"बहुत करुण स्वर में अजामिल ने अपने पुत्र नारायण से कहा—'मेरे पास आओ, मैं मर रहा हूँ।' वह यमदूतों से बहुत भयभीत था।

"कृष्ण ने उसकी रक्षा के लिए विष्णु के दूतों को भेजा। विष्णु के दूतों के भी चार हाथ थे, वे ठीक भगवान् नारायण जैसे दिखाई दे रहे थे। गम्भीर वाणी में उन्होंने यमदूतों से कहा, "तुम लोग क्या कर रहे हो, रुको। तुम इस व्यक्ति को यमराज के पास नहीं ले जा सकते।"

प्रभुपाद ने इन्दौर में अपना भाषण समाप्त किया—और इन्दौर का प्रवास भी। गुजरात राज्य में स्थित सुरत में जाने और कृष्णभावनामृत कार्यक्रम करने के लिए उन्होंने एक आमंत्रण स्वीकार कर लिया था और अपने शिष्यों के साथ उन्हें शीघ्र वहाँ जाना था। बम्बई के भक्त भी वहाँ उनके साथ हो जायेंगे। प्रभुपाद की इन्दौर-यात्रा गीता जयंती महोत्सव के लिए हुई थी, किन्तु महोत्सव तो उनके इन्दौर में किये गये धर्मोपदेश का एक छोटा-सा अंश था। वहाँ वे सैकड़ों लोगों से मिले और उन्होंने बहुत-से आजीवन सदस्य तथा मित्र बनाए। उन्होंने उनके जीवन को प्रभावित किया। इन्दौर में उनकी उपस्थिति का स्थायी प्रभाव होगा।

बाबा बालमुकुंद : *मैंने इस गीताभवन में बहुत-से साधु और महान् संत देखे हैं। उसी स्थान में मैंने श्रील प्रभुपाद को भी देखा। मैं श्रील प्रभुपाद और उनके उपदेशों से बहुत प्रभावित हुआ। यह इसलिए हुआ कि प्रभुपाद ने भक्ति की वास्तविकता को बताया था,*

इसलिए कि वे पक्के भक्त थे, उन्होंने पश्चिम के लोगों को बदल दिया और उन्हें एक नया पहनावा दिया, नया खान-पान सिखाया, उनकी संस्कृति को बदल दिया और उन्हें सच्ची भक्ति दी। और यह सबसे बड़ी चीज थी जो प्रभुपाद ने की है। संसार के लोग चाहे जो कहें, किन्तु प्रभुपाद ने भगवान् कृष्ण की भक्ति के लिए अद्भुत कार्य किया है। जो कार्य स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ और अन्य लोग नहीं कर सके थे, उसे श्रील प्रभुपाद ने कर दिखाया है। यह अद्भुत बात है।

• • •

सुरत
दिसम्बर १७, १९७०

यह ऐसा था, जैसे स्वप्न साकार हुआ हो। हजारों लोग कितनी दूर तक सड़क पर खड़े थे, जबकि करताल और मृदंग बजाते हुए और हरे कृष्ण कीर्तन करते हुए भक्तों की भीड़ आगे बढ़ रही थी। दर्शक छतों पर खड़े थे या खिड़कियों और दरवाजों में एकत्रित थे और बहुत-से अन्य लोग जुलूस में शामिल हो रहे थे। पुलिस ने चौराहों पर यातायात बन्द कर दिया था, केवल कीर्तनियों का जुलूस निकल सकता था। कच्ची सड़क पर, जिसे झाड़ू से अभी-अभी साफ किया था और जहाँ पानी का छिड़काव कर दिया गया था, चावल के शुभ वैदिक प्रतीकों के नक्शे आटे से सजा दिए गये थे। ताजे कटे कदली खंभे मार्ग को दोनों ओर अलंकृत कर रहे थे। संकरी सड़क के ऊपर दोनों ओर से महिलाओं की साड़ियाँ तानकर कीर्तन-दल के ऊपर रंगारंग चंदवा टाँग दिया गया था।

सुरत में प्रभुपाद के मेजबान श्रीमान् भगुभाई जरीवाला ने प्रतिदिन के जुलूस के मार्गों का स्थानीय समाचार-पत्रों में विज्ञापन करा दिया था, और अब भक्त-मंडली दिन-पर-दिन नगर के विभिन्न भागों में कीर्तन का जुलूस निकाल रही थी। प्रभुपाद के बीस से अधिक शिष्य प्रतिदिन जुलूस का नेतृत्व करते थे और हजारों भारतीय कीर्तन करते हुए, उत्साहित होकर तालियाँ बजाते हुए, उन्हें देखने को कोलाहल मचाते थे और घरों की छतों से महिलाएँ उन पर फूलों की पंखड़ियाँ बिखेरती थीं।

प्राय: जुलूस को रुक जाना पड़ता था, जबकि परिवारों के लोग कीर्तनियों को मालाएँ पहनाने के लिए आगे आ जाते थे। कभी कभी भक्तों को इतनी मालाएँ पहना दी जाती थीं कि उनके प्रसन्नतापूर्ण चेहरे मुश्किल से दिखाई देते थे। और भक्त मालाओं को भीड़ के लोगों में बाँट देते थे। भक्तों का इतना भव्य स्वागत इससे पूर्व कभी नहीं हुआ था।

"यह नगर भक्तों का है," प्रभुपाद ने कहा। उन्होंने सुरत के लोगों की तुलना सूखी घास से की जिसने आग पकड़ ली हो। वे प्रकृति से कृष्ण-चेतनायुक्त थे, किन्तु श्रील

प्रभुपाद और उनके संकीर्तन-दल का आगमन एक लौ की तरह था, जिससे नगर में आध्यात्मिक ज्वाला फूट निकली।

हर प्रात:काल ऐसा लगता था कि सुरत का सम्पूर्ण नगर बाहर आ गया है, जब हजारों लोग सात बजे सवेरे निर्धारित स्थान पर पहुँच जाते थे। ऐसा लगता था कि पुरुष, नारी, श्रमिक, सौदागर, व्यवसायी, युवक, वृद्ध और बच्चे—सभी कीर्तन में भाग ले रहे हों। सड़कों और घरों में भीड़ लगाए वे कीर्तन-दल की प्रतीक्षा करते थे और जब भक्त-मंडली पहुँचती थी, तो हर एक प्रसन्न हो उठता था।

प्रभुपाद सवेरे के केवल एक-दो जुलूसों में सम्मिलित हुए थे; उन्हें श्रीमान् जरीवाला के घर में अपने कमरे में रहना पसन्द था। हर दिन सवेरे जब भक्त जाने को होते, तो प्रभुपाद अपनी दूसरी मंजिल के छज्जे पर बाहर निकल आते थे। यद्यपि सवेरे का समय बहुत ठंडा होता और बहुत-से भक्त बीमार थे, लेकिन जब वे देखते कि प्रभुपाद बाहर आ गये हैं और उन्हें आशीर्वाद दे रहे हैं, तो उनको कष्ट से राहत मिल जाती। प्रभुपाद हाथ हिलाकर उन्हें विदा देते और भक्त सड़क पर उतर जाते और कीर्तन करते हुए चल पड़ते।

भक्तों के पास मृदंग और करतालों के अतिरिक्त अन्य कोई उपरकण नहीं था—न पताकाएँ थीं, न बैंडबाजा था, न रथ था, केवल कीर्तन का उत्साह था। न उनके लिए कोई औपचारिक पंडाल था, न साधु समाज था, न वेदान्त सम्मेलन था, न गीता जयंती महोत्सव था। था केवल कृष्ण-भक्तों का एक सम्पूर्ण नगर जो अमरीकी हरे कृष्ण कीर्तनियों की उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहता था।

हरे कृष्ण कीर्तन के लिए पूजित होना उस अनुभव के विपरीत था, जो भक्तों को पश्चिम में हुआ था। इसके लिए भक्तों को हैमबर्ग, शिकागो, न्यूयार्क, लंदन, लास ऐंजिलेस में अपमानित होना पड़ा था, उन्हें गिरफ्तारी की धमकियाँ दी गई थीं, उन पर आक्रमण किये गये थे और उनकी उपेक्षा की गई थी। हाँ, कभी कभी लोगों ने उनके प्रति सहिष्णुता दिखाई थी, कुछ ने उन्हें सराहा भी था, पर वे सम्मानित कभी नहीं हुए थे।

प्रतिदिन बाहर जाने का संकीर्तन थकाने वाला था, क्योंकि मार्ग लम्बा था और बीच में बार-बार रुकना पड़ता था। बहुत-से भक्तों के गले गाते-गाते खराब हो गये थे और उनके हाजमे की गड़बड़ी बनी हुई थी। किन्तु भक्त हर बात को भगवान् चैतन्य का अनुग्रह समझकर स्वीकार कर रहे थे, जो उन्हें एक पूरे नगर को अपने संकीर्तन-आन्दोलन में दत्तचित्त बनाने का अवसर दे रहा था।

पश्चिम से बीस भक्त अभी-अभी सुरत पहुँचे थे, उनके साथ एक अमरीकी फोटोग्राफर, जान ग्रीसर भी एशिया मैगजीन की ओर से आया था। जान हर दिन कीर्तन के जुलूस के फोटो लेने जाता था और जब वह इस कार्य में लगा होता था, तो उसे लगता कि

वह फोटो खींचने के कार्य से कहीं बड़ी किसी चीज में बँधता जा रहा था।

सुरत के लोगों को, जो अपने आपको हृदय से कृष्ण-भक्त मानते थे, प्रभुपाद महान् संत लगे। और वे उनके शिष्यों को भी, जिनमें उन्हें सच्चे वैष्णवों के गुण मिले, संत मानते थे। भक्तों की वेशभूषा, उनके व्यवहार और जीवन-शैली से सच्चा भक्तियोग प्रकट होता था और उनका कीर्तन भगवान् के पवित्र नाम की सच्ची आराधना था। सुरत के लोग जानते थे कि भगवान् के भक्तों का सम्मान करके वे स्वयं भगवान् कृष्ण का सम्मान कर रहे थे। कृष्ण के प्रति भक्ति उनकी अपनी संस्कृति का मर्म था, फिर भी उन्होंने ऐसी भक्ति पहले कभी नहीं दिखाई थी, जैसी कि वे इस समय दिखा रहे थे।

कई दिन कीर्तन-जुलूस निकलने के बाद सुरत के मेयर, श्रीमान् वैकुण्ठ शास्त्री ने सभी स्कूल बन्द करवा दिए और पूरे नगर में अवकाश घोषित कर दिया। अब हर एक को आजादी थी कि वह भगवान् चैतन्य के अनुग्रह का यश गाए और हरे कृष्ण कीर्तन करे। नगर-भर में इश्तिहार लगा दिए गये कि, "कृष्ण के अमरीकी और योरोपीय भक्तों का स्वागत है" और "हरे कृष्ण आन्दोलन के सदस्यों का स्वागत है।"

• • •

जब भक्त श्रीमान् जरीवाला के घर लौटते थे तो वे थके होते थे परन्तु प्रसन्न होते थे और प्रभुपाद उनकी प्रतीक्षा में रहते थे। ज्योंही भक्त प्रभुपाद को देखते थे, वे नतमस्तक हो जाते थे।

चिदानन्द : *सीढ़ी के नीचे खड़े हुए प्रभुपाद हमारा अभिवादन कर रहे थे। हम आह्लाद से भरे थे, फूल-मालाओं से हमारे शरीर आच्छादित थे, हमारे चेहरे मुसकानों में डूबे थे। हमें बड़ी प्रसन्नता थी कि हमारा इस तरह स्वागत हुआ। ऐसा लगता था मानो वहाँ प्रभुपाद यह कहते हुए खड़े थे कि, "देखो, यह कृष्णभावनामृत कितना आश्चर्यजनक है! देखो, तुम कितने प्रसन्न लग रहे हो!" वे वहाँ मुसकराते हुए खड़े थे। उन्हें प्रसन्नता थी कि हम प्रसन्न थे।*

पर जब भक्त श्रीमान् जरीवाला के घर लौटे तो वे अकेले नहीं थे, उनके पीछे सैकड़ों भारतीयों की भीड़ थी, जो श्रील प्रभुपाद के दर्शनों के लिए उत्सुक थी। श्रील प्रभुपाद के साथ उनकी शिष्य मंडली और कोलाहल करती हुई सुरत के भक्तों की भीड़ किसी तरह सिमटकर प्रभुपाद के कमरे में प्रविष्ट हुई। जो आगन्तुक प्रवेश पा सके वे इस्कान और उसके कार्यकलापों के बारे में पूछने लगे, जबकि जो बाहर थे, वे अन्दर जाने के लिए धक्कमधक्का कर रहे थे। घर की चारों ओर की भीड़ इतनी बड़ी हो गई कि यातायात रुक गया। कमरे के अंदर प्रभुपाद प्रश्नों के उत्तर दे रहे थे, उधर बाहर भीड़ और उसकी

अधीरता में वृद्धि हो रही थी। अपने सौभाग्य से लोगों को प्रभुपाद की महानता की अनुभूति हुई थी और अब वे उनके निकट पहुँचना चाहते थे। जब उनकी अभिलाषा अधिक बलवती और उत्सुकता अधिक तीव्र होने लगी, तो प्रभुपाद अपने आसन से उठे और बाहर छज्जे पर निकल आये। हाथ ऊपर उठाकर भीड़ ने तुमुलनाद किया, "हरे कृष्ण।"

जब प्रभुपाद अन्दर चले गये, तो भीड़ को संतोष नहीं हुआ और उन्होंने अपने कुछ शिष्यों से कहा कि वे कोशिश करें और भीड़ को शान्त करें। कई शिष्य बाहर लोगों के पास गये, उनके प्रश्नों के उत्तर देते हुए उन्होंने समझाया कि प्रभुपाद उनसे मिलने के लिए फिर बाहर आयेंगे।

भगुभाई जरीवाला प्रभुपाद के आन्दोलन के सम्पर्क में कई वर्ष पहले सैन फ्रांसिस्को में आये थे, जब उन्होंने सैन फ्रांसिस्को के मन्दिर के लिए कृष्ण की एक चांदी की मूर्ति दी थी। अब जरीवाला परिवार अतिथियों को स्थान देने के लिए अपने मकान की छत के साधारण कमरों में चला गया था और उसने शेष मकान प्रभुपाद और उनके शिष्यों के लिए छोड़ दिया था। अतिथि-प्रेमी जरीवाला परिवार ने भक्तों को यह अनुभव कराया कि वे उसके साथ हमेशा के लिए रह सकते थे।

जो प्रसाद तैयार होता, वह गुजराती पाक-विद्या का सर्वोत्तम नमूना होता और जब कोई व्यंजन प्रभुपाद को विशेष रूप से रुचिकर लगता, तो वे अपनी किसी शिष्या से कहते कि वह श्रीमती जरीवाला से उसको बनाना सीख ले। प्रभुपाद के साथ दिन में दो बार प्रसाद ग्रहण करने से भक्तों को भारत में अपने गुरु महाराज से आत्मीयता अनुभव करने का यह एक और अवसर था। अगर वे संसार के किसी और भाग में उनके साथ रहे होते, तो ऐसी आत्मीयता कदाचित् सम्भव न होती।

साढ़े चार बजे सवेरे से आरम्भ करके प्रभुपाद राधा और कृष्ण के सामने कीर्तन और आरती करते थे और *श्रीमद्भागवत* पर व्याख्यान देते थे। उनका कमरा अभ्यागतों से भर जाता था, जिसमें जरीवाला परिवार के लोग भी होते थे। यद्यपि बाहर के कार्यक्रमों में प्रभुपाद सामान्य रूप से हिन्दी में बोलते थे, किन्तु सवेरे की इन सभाओं में अपने शिष्यों की सुविधा के लिए वे हमेशा अंग्रेजी में बोलते थे। अजामिल पर उनका भाषण चलता रहा; वे इस बात पर ध्यान केन्द्रित करते रहे कि अजामिल का अध:पतन कुसंगति के कारण और उद्धार भगवान् के पवित्र नाम को जपने से हुआ। श्रील प्रभुपाद के शिष्यों के लिए, जिनकी अभिलाषा केवल हरे कृष्ण शुद्ध रूप से जपकर भगवान् को प्राप्त करने की थी, ये प्रकरण विशेष प्रकार से सम्बन्धित थे। प्रभुपाद ऐसे ही प्रकरणों पर बोल रहे थे।

"जो कोई भी कृष्ण का नाम लेता है, वह तुरन्त सभी पाप-कर्मों से मुक्त हो जाता है।

कृष्ण के नाम में यही शक्ति है। कठिनाई यह है कि मुक्ति पाने के बाद हम फिर भूलें करते हैं। कृष्ण के नाम में शक्ति है—ज्योंही आप यह नाम लेते हैं, आप तुरन्त सारे दोषों से मुक्ति पा जाते हैं। लेकिन यदि कोई सोचता है कि, 'मैं कृष्ण का नाम जपता हूँ, इसलिए यदि मैं पाप भी करूँ, तो मेरे जप से उस पाप का निराकरण हो जायेगा,' तो यह सबसे बड़ा अपराध है। यह वैसा ही है, जैसा कभी कभी ईसाइयों के चर्चों में होता है कि लोग रविवार को वहाँ जाते हैं और अपने पापों को स्वीकार करते हैं और उन्हें पापकर्मों के परिणाम से मुक्त मान लिया जाता है। किन्तु चर्च से लौटने के बाद वे फिर वही पाप-कर्म करते हैं, इस आशा से कि 'अगले सप्ताह जब मैं चर्च जाऊँगा और अपने पापों को स्वीकार कर लूँगा, तो उनका निराकरण हो जायेगा' इस तरह का विचार निषिद्ध है... यदि आप आध्यात्मिक जीवन स्वीकार करते हैं और पाप-कर्म करते जाते हैं, तो आप कभी भी आगे नहीं बढ़ सकेंगे।"

• • •

प्रभुपाद के शाम के बाहर के कार्यक्रम में उपस्थिति अच्छी होती थी। नगर के अधिकारी सुरत के मुख्य चौराहों में से एक को उत्सव के लिए निर्धारित करते थे। वे यातायात के लिए मार्ग बदल देते थे और मंच बनाकर वहाँ ध्वनि विस्तारक यंत्र की व्यवस्था कर देते थे, रात में वहाँ हजारों लोग एकत्रित होते थे। कभी कभी भीड़ इतनी विशाल और उत्साहित हो जाती कि प्रभुपाद के लिए उस कोलाहल से अधिक ऊँचे स्वर में बोलना कठिन हो जाता और तब वे कीर्तन कराने लगते। इसके फलस्वरूप शान्ति स्थापित हो जाने पर वे अपने एक-दो शिष्यों से व्याख्यान कराते। उसके बाद वे स्वयं बोलते। यदि भीड़ फिर शोर-गुल करने लगती तो वे कहते, "अच्छा, तो हम कीर्तन करेंगे।" या कभी-कभी वे बैठ जाते और हजारों लोगों को, जो उनके चरणकमलों का स्पर्श करने और प्रसाद पाने के लिए उनके पास आते, मिस्री के छोटे-छोटे टुकड़े वितरित करते।

गिरिराज : *इस ब्लाक के इर्द-गिर्द का पूरा क्षेत्र लोगों से भरा था। वे सभी श्रील प्रभुपाद और कृष्णभावनामृत के पीछे पागल थे। यद्यपि वह क्षेत्र विस्तृत था, फिर भी वह पूरा भरा था, लोग छतों पर बैठे थे, खिड़कियों से देख रहे थे, सीमेंट की पट्टियों या इधर-उधर बिखरे शिला खंडों पर बैठे थे।*

प्रभुपाद के कार्यक्रम की हर बात से हर एक को पूरा संतोष था। वृद्ध लोगों को वह इसलिए पसन्द था कि उसमें श्रील प्रभुपाद जैसा संत-पुरुष और उनके युवा विदेशी शिष्य सम्मिलित थे। और बुद्धिजीवियों को वह इसलिए पसन्द था कि प्रभुपाद अत्यन्त ठोस

दार्शनिक विचार दे रहे थे। और बच्चे उसे इसलिए पसन्द कर रहे थे कि वे दौड़-भाग कर सकते थे और कीर्तन में सम्मिलित हो सकते थे।

माद्रीदासी : एक कार्यक्रम में हम ऐसे घिर गये कि हम कार से बाहर भी नहीं निकल सके। श्रील प्रभुपाद के दर्शनों के लिए वे इतने आतुर थे। वहाँ इतने अधिक लोग थे। प्रभुपाद बोले, "अच्छा तो अगली रात केवल महिलाओं की रात होगी।" अतः अगली रात में केवल महिलाएँ आईं। फिर भी अपार भीड़ हो गई। और प्रभुपाद ने बहुत आश्चर्यजनक व्याख्यान दिया।

ब्रूस : एक कार्यक्रम में इतना शोर-गुल हुआ कि किसी ने बात करना बन्द ही नहीं किया। इसलिए प्रभुपाद केवल ब्रह्म-संहिता का पाठ करने लगे। पूरे कार्यक्रम में यही चलता रहा। वे केवल ब्रह्म-संहिता का पाठ करते रहे। तब उसे समाप्त करके वे बाहर चले गये।

चिदानंद : इन कार्यक्रमों में सम्मिलित होने के लिए जाने से पूर्व प्रभुपाद ऐसे लगते थे, मानो कोई सेनापति युद्ध में जाने की तैयारी कर रहा हो। वे अपने कमरे से खूब सज-धजकर चमक-दमक के साथ बाहर निकलते—माया से युद्ध करने के लिए पूरी तैयारी के साथ। हजारों लोग उनकी प्रतीक्षा में रहते, मेरी तो समझ में न आता कि क्या हो रहा था। इतने अधिक लोगों पर नियंत्रण करना मेरे वश के बाहर था। किन्तु प्रभुपाद तो माया से युद्ध कर रहे थे। उन्हें इन सब लोगों को आश्वस्त करना था; और आने वालों की संख्या जितनी ही अधिक होती, वे अपने आपको उतना ही अधिक बलशाली अनुभव करते।

• • •

प्रभुपाद धर्मोपदेश के लिए बाहर के गाँवों में भी जाते थे। वे कार में जरीवाला, कई शिष्यों और राधा-कृष्ण के अर्चाविग्रहों को लेकर बारडोली या मियोल निकल जाते थे। गाँवों के घर पक्की ईंटों से बने होते थे, उनकी छतें फूस की थीं और फर्श और दीवारें गाय के गोबर से बनी होती थीं। प्रभुपाद के स्वागत के लिए गाँव वाले अपने घरों के बाहर जमीन पर चावल के आटे से अलपना बनाते थे और गलियों में दोनों ओर गमले रखकर उन्हें केले के पत्तों और नारियल से सजाते थे।

श्रीमान् एन.डी. पटेल : मेरे गाँव के लोग प्रभुपाद की उपस्थिति से बहुत प्रभावित थे। वे कहा करते थे कि उन्होंने कीर्तन द्वारा आश्चर्य घटित कर दिया था। "वे अद्भुत संत हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं हैं।" लोग कहते थे। "केवल भगवान् का नाम जपने से इतने पाश्चात्य लोग भक्त बन गये हैं।" प्रभुपाद द्वारा कथित भक्ति के व्यावहारिक तरीके से लोग बहुत प्रभावित थे। अपने व्याख्यान से प्रभुपाद न केवल वैष्णवों पर वरन् इतने अधिक

ईसाइयों और पारसियों पर भी अच्छा प्रभाव उत्पन्न करते थे। कुछ मुसलमान मित्र तक भगवान् कृष्ण में विश्व-नियंता ईश्वर के रूप में विश्वास करने लगे थे।

जहाँ तक संतों का सम्बन्ध है, अतीत में कोई भी संत इस दार्शनिक विचारधारा का इस प्रकार प्रचार नहीं कर सका था। अपने गाँव में हम पहले से वैष्णव हैं, लेकिन हमारा विश्वास सूर्यजी, दुर्गा, ठाकुरजी आदि में था। किन्तु प्रभुपाद की इस व्याख्या के बाद कि गीता क्या है, भगवान् कृष्ण क्या हैं, हम हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे, का जप कर रहे हैं। जब से प्रभुपाद ने गाँव में अपना व्याख्यान दिया है, तब से लोग इतने प्रभावित हैं कि उनकी अनुपस्थिति में भी लोग महामंत्र को जोर से जपते हैं और एक-दूसरे का अभिवादन हरे कृष्ण, हरे कृष्ण कहकर करते हैं। विदा होते समय भी लोग हर भक्त और प्रभुपाद को हरे कृष्ण कहकर नमस्कार करते थे।

• • •

जब कोई बाहर का कार्यक्रम न होता, तो प्रभुपाद अपने कमरे में बैठते और अभ्यागतों से मिलते। संसद के एक सदस्य से, जो प्रभुपाद से मिलने आये थे, प्रभुपाद ने कहा कि वे जहाँ भी जाते थे, उन्हें पिछड़े हुए और गरीबी में धंसे हुए भिक्षुक के रूप में भारत के चित्र का सामना करना पड़ता था। पाश्चात्य देशों से यह भीख माँगकर कि 'हमें चावल दीजिए, हमें धन दीजिए, हमें दान दीजिए, भारत के राजदूतों ने भारत के ऐसे चित्र में और भी संपुष्टि पैदा कर दी थी। प्रभुपाद ने बताया कि भारत के पास सबसे बड़ी सम्पदा उसकी आध्यात्मिक संस्कृति और *भगवद्गीता* के ज्ञान की थी। प्रभुपाद इस सम्पदा को पश्चिम ले गये थे और उसका नि:शुल्क वितरण किया था। वे भिक्षुक नहीं थे।

यमुना : *प्रभुपाद सुरत में लोगों के मिलने के समय या जब वे कार में सवार हों, पैदल चल रहे हों, खड़े हों या बैठे हों, बराबर जप करते रहते थे। उनकी अंगुलियाँ माला की केसरिया रंग की थैली में हमेशा चलती रहती थीं। वे सदा वैष्णव बने रहते—कृष्ण के सच्चे भक्त, अच्छी तरह सजे-धजे, मस्तक पर सुन्दर, साफ टीका लगाए हुए और हाथ हमेशा माला की थैली में रखे हुए। जब लोगों से मिलने के लिए वे बैठे होते, तो उनकी अकल्पनीय सुन्दरता से लोग सहज ही प्रभावित हो जाते थे। श्रील प्रभुपाद कहते थे कि जो लोग अपने आपको दूसरों के प्रति अर्पित कर देते हैं, वे उदारचेता कहलाते हैं। और श्रील प्रभुपाद सुरत की अपनी लीलाओं के समय ऐसे ही थे। वे जिससे भी मिलते, उसे कृष्ण नाम का दान देते थे। अपनी महान् शक्ति से उन्होंने लोगों के हृदयों को प्रभावित किया था।*

• • •

हर सवेरे *श्रीमद्भागवत* की कक्षा में प्रभुपाद अजामिल की कहानी का एक और अंश जोड़ते थे। कभी कभी वे भारतीय संस्कृति में ह्रास को निर्दिष्ट करते और भारत की अपनी यात्रा में देखे गये उसके विशिष्ट उदाहरणों का उल्लेख करते।

"मुझे अब आपको यह बताते हुए बहुत दुख है कि मैंने आपके नगर में दो मन्दिर देखे हैं—उन्हें राम मन्दिर कहते हैं, लेकिन वहाँ राम नहीं हैं। यह धोखाधड़ी चलती रही है और आप उसे स्वीकार करते रहे हैं। वहाँ राम अर्चाविग्रह की पूजा नहीं है, वरन् एक पुरुष, श्रीराम का चित्र है। और लोग इतने मूर्ख हैं कि वे यह नहीं पूछते कि ऐसा क्यों हो रहा है। इन्दौर में गीताभवन में मैंने देखा कि वहाँ बहुत-सी बेमतलब की चीजें हैं। एक दूसरे स्थान में मैंने गीता समिति देखी, और वहाँ कृष्ण का एक भी चित्र नहीं था, केवल एक दीपक था। और यह सब धर्म के नाम में हो रहा है।

"गत रात इस लड़के ने मुझे सूचित किया कि किसी स्वामी द्वारा *भगवद्गीता* का वितरण होने जा रहा है, किन्तु *भगवद्गीता* के अनुसार वह स्वामी मूर्खाधिराज है। वह *भगवद्गीता* बाँट रहा है और लोग उसे स्वीकार कर रहे हैं और उसका मूल्य चुका रहे हैं। यह सब कुछ हो रहा है। सारे संसार में ऐसी ही स्थिति है और वह बहुत गम्भीर है। धर्म के नाम पर अधर्म चल रहा है।"

प्रभुपाद ने समझाया कि जैसे अजामिल का पतन हुआ था, वैसे ही भारतीय संस्कृति का भी पतन हो गया है। लोगों के लिए एक ही आशा शेष रह गई थी कि वे कृष्णभावनामृत की सही स्थिति में पहुँचेंगे।

"तो केवल भारत में ही नहीं, सारे संसार में शान्ति नहीं हो सकती, जब तक कि आप सम्पूर्ण सामाजिक संरचना में सुधार नहीं करते और वह केवल कृष्णभावनामृत आन्दोलन द्वारा ही हो सकता है। देखिए इस आदमी का पतन कैसे हुआ। वे लोलुप लोग हैं; उन्हें समाज की चिन्ता नहीं होती, उन्हें वृद्ध-जनों की चिन्ता नहीं होती; वे सड़क में, गली-कूचों में, सागर-तट पर, सिनेमा-घरों में सर्वत्र मनमानी करते हैं। ऐसे व्यापार चल रहे हैं। लोगों को आकृष्ट करने के लिए चलचित्र घरों में भी उनके विज्ञापन दिये जाते हैं। भारत में पहले ऐसा नहीं था। लेकिन अब ऐसी अनर्थकारी चीजों का प्रवेश लोगों को और अधिक लोलुप बनाने के लिए किया जा रहा है। लोलुप बनने का तात्पर्य नरक में जाना है। यदि आप अपनी उन्मुक्ति का द्वार खोलना चाहते हैं, तो *महत्* की, सच्चे भक्तों की सेवा में अपने आपको लगाइए। यदि आप जीवन में नारकीय स्थिति का द्वार खोलना चाहते हैं, तो आप उन लोगों से मेल-जोल बढ़ाइए जिनकी अतिशय आसक्ति स्त्रियों में है।"

उन्होंने बूचड़खाने के बारे में बताया और लोगों में फैले अवैध यौनाचार की निन्दा की। अवैध यौनाचार के बारे में बोलते हुए उन्होंने कहा कि अजामिल के समय में जो एक

विरली घटना थी, वह आजकल आम बात हो रही है।

"युवाजन अपनी रक्षा कैसे कर सकते हैं? वे प्रशिक्षित नहीं हैं। अजामिल प्रशिक्षित था, तब भी उसका पतन हो गया। मैंने बहुत-से पार्कों में, जैसे गोल्डेन गेट पार्क में, कारों के अन्दर लड़के-लड़कियों को...। ऐसा कहा जाता है कि ऐसे आचरण की आशा शूद्रों से की जाती है, उच्च वर्णों से नहीं। इसलिए समझने की कोशिश कीजिए। लोग समझते हैं कि वे आगे बढ़ रहे हैं, लेकिन वे आगे नहीं बढ़ रहे हैं। वे पतित होते जा रहे हैं, सारा संसार पतित हो गया है और भारत उस पतन का अनुकरण कर रहा है। पतितों के संसर्ग से कोई व्यक्ति स्वयं कैसे पतित हो जाता है—यह इस कहानी से पता चलता है।"

• • •

प्रभुपाद सुरत में वह सब कुछ कर चुके थे, जो उनका इरादा था। उन्होंने लोगों में भगवान् का पवित्र नाम वितरित किया था और लोगों ने उसे अंगीकार किया था। सुरत के लोग यद्यपि इस बात के लिए तैयार नहीं थे कि वे अपने जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाएँ और इस्कान भक्तों की तरह रहें, फिर भी वे इस बात की सराहना करते थे कि प्रभुपाद ने पाश्चात्यों को भगवान् कृष्ण का भक्त बना दिया था और वे धर्मशास्त्रों के सन्देश का उपदेश दे रहे थे तथा हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे थे। उन्होंने प्रभुपाद की बातें सुनी थीं, धर्म-रूढ़ियों या कर्मकाण्ड के वशीभूत होकर नहीं, वरन् आध्यात्मिक जीवन के महत्त्व को समझकर और यह मानकर कि प्रभुपाद और इस्कान निश्छल, निष्कपट थे।

प्रभुपाद के शिष्यों के सुरत-अधिवास से इस बात की झलक मिली कि यदि हर एक व्यक्ति भक्त बन जाये तो संसार का रूप कैसा हो सकता है।

• • •

इलाहाबाद
जनवरी १९७१

कुंभ-मेला पृथ्वी पर मानव-जाति का सबसे बड़ा जमघट है। हर बारहवें वर्ष समस्त भारत से साधु और तीर्थयात्री इलाहाबाद में गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम, त्रिवेणी-तट पर इकट्ठे होते हैं और एक शुभ घड़ी में, जिसमें स्नान करने से यात्रियों को विश्वास होता है कि वे जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो जायेंगे, डेढ़ करोड़ तक व्यक्ति पवित्र जल में प्रवेश करते हैं। कुंभ मेले का एक छोटा संस्करण, माघ मेला, हर वर्ष माघ (दिसम्बर-जनवरी) के महीने में होता है। किन्तु जनवरी १९७१ का मेला एक कुंभ मेले से दूसरे कुंभ मेले के बीच में पड़ रहा था और वह अर्ध कुंभ मेला कहलाता था। उसमें

लाखों तीर्थयात्री आने वाले थे, और श्रील प्रभुपाद ने उस अवसर का लाभ उठाने के लिए अपने शिष्यों के साथ मेले में सम्मिलित होकर धर्मोपदेश करने का निर्णय लिया।

प्रभुपाद के शिष्य ट्रेन द्वारा सुरत से इलाहाबाद के लिए चले, किन्तु तमाल कृष्ण, हंसदूत, नन्दकुमार और अन्यों को साथ लेकर प्रभुपाद थोड़े समय के लिए बम्बई गये और वहाँ से कलकत्ता पहुँचे, इस बात का निश्चय करने के लिए कि दाई निप्पान द्वारा जहाज से भेजी गई उनकी पुस्तकें सिंधिया कम्पनी के मालगोदाम में सुरक्षित रूप में रख दी गई थीं। उन्होंने इलाहाबाद ले जाने के लिए राधा-कृष्ण की चौबीस इंच की पीतल की मूर्ति भी खरीदी। ११ जनवरी को उन्होंने लिखा।

> ...कल सवेरे हम लोग अर्धकुंभ मेला उत्सव में शामिल होने के लिए इलाहाबाद जा रहे हैं। हम ४० भक्त एक साथ जा रहे हैं और माघ मास में वहाँ ७० लाख अन्य भक्तों के पहुँचने की आशा की जाती है।

करीब पचीस भक्त सुरत से ट्रेन द्वारा इलाहाबाद के लिए चले थे और अन्यों के शीघ्र आने की आशा थी, जो संयुक्त राज्य और इंगलैंड के नवागन्तुक थे। तेईस घंटे की रेल-यात्रा के बाद भक्तों का पहला दल इलाहाबाद पहुँचा। जब वे गाड़ी से उतरे, तो उन्हें केवल कुहरा दिखाई दिया। एक ब्रह्मचारी आश्रम का पता लेकर वे आगे बढ़े, जहाँ उन्हें मेला-स्थल में अपना तम्बू गाड़ने के पहले ठहरना था।

भक्तों को कुछ पता नहीं था कि आगे क्या होगा, जब वे कई घोड़ा-गाड़ियों में सिमटकर बैठे और निर्धारित ब्रह्मचारी आश्रम की ओर चले। उन्होंने सुन रखा था कि त्रिवेणी में नहाने के लिए कुंभ मेला का अवसर सबसे शुभ होता है और उसका जल बर्फ जैसा ठंडा होता है। कुहरे से भरी उस प्रात:बेला में उन्होंने देखा कि तीर्थयात्री सड़कों पर जा रहे थे, कुछ ऊँटों पर सवार थे और सिपाही राइफल लिए थे। सूर्योदय के समय आश्रम में पहुँचकर उन्होंने अपने सामने पवित्र गंगा को देखा।

दूसरे दिन सवेरे भक्त तीर्थ-स्थल के लिए चले। वे उन तीर्थयात्रियों की भीड़ में मिल गये, जो त्रिवेणी की ओर जा रही थी। रामबाग रेलवे स्टेशन से गुजरते हुए उन्होंने सूचना पढ़ी, "इस स्थान से पवित्र गंगा और यमुना का संगम और किला पाँच किलोमीटर है।" बाइसिकल रिक्शाओं में सवार भक्त, तीर्थयात्रियों की आगे बढ़ती भीड़ में मिल गये और शीघ्र ही उन्होंने अपने सामने खेमों का वह नगर देखा, जो अभी केवल एक सप्ताह पहले खाली मैदान था। छोटे खेमों से, बड़े खेमों से और विशाल पंडालों से, जिनके ऊपर पताकाएँ फहरा रही थीं, विसंगत ध्वनियों का कोलाहल उठ रहा था, जिसमें संगीत,

लाउड-स्पीकरों से विभिन्न भाषाओं में होती घोषणाएँ, भजनों और प्रार्थनाओं की अनुगूंज का मिश्रण था।

भक्त अपनी रिक्शाओं से उतर गये, उनका किराया चुकाया और तीर्थयात्रियों के प्रवाह के साथ आगे बढ़े। उनके चलने के साथ जमीन का रूप बदल गया, घास का मैदान रेत में बदल गया और रेत कीचड़ में बदल गई। लाउड-स्पीकर से सुनाई देने वाले संगीत, मंत्रों और भजनों की ध्वनि भी तेज हो गई। पूरे मार्ग में दोनों ओर कोढ़, फील-पाँव और विकृत अंगों वाले भिखारी बैठे थे।

मेला समिति ने इस्कान को एक प्रवेशद्वार के निकट अच्छा स्थान दिया था और अनुभवी भक्तों में से कुछ ने खेमे गाड़ने के लिए श्रमिक लगा रखे थे। इस्कान का पंडाल विशाल और खूब रंगदार था, उसके निकट तीन छोटे तम्बू थे—एक पुरुषों के लिए, एक महिलाओं के लिए और एक श्रील प्रभुपाद के लिए। नालीदार टीन की चादरों का एक पतला-सा कुटीर रसोई-घर के तौर पर काम देने के लिए था। प्रभुपाद अगले दिन पहुँचने वाले थे, और भक्तजन घास और दरियाँ बिछाने का काम तेजी से कर रहे थे। भक्तों को स्वयं अपना चूल्हा जलाना था, सब्जियाँ लानी थीं, कपड़े धोने थे और अपने लिए हर काम करना था—और यह सब एक ठंडे, सज्जाहीन, रेतीले आवास में। एक आजीवन सदस्य के घर पर राजकुमारों की भाँति सेवा-शुश्रूषा पाने से यह बिल्कुल ही भिन्न था।

भक्तजन एक महान् धार्मिक उत्सव और जन-समुदाय के बीच में थे और बिना प्रभुपाद के उनमें से अधिकतर मेले के विचित्र दृश्यों और शोर-गुल से घबरा रहे थे। योगी दिन-भर एक ही मुद्रा में बैठे थे, और भीड़ उन्हें देखती खड़ी थी। साधारण लाल वस्त्र पहने, रुद्राक्ष की मालाएँ धारण किये और जटाएँ बिखेरे त्रिशूलधारी शिव के भक्त गांजा का दम लगाते बैठे हुए थे। हाथियों का एक जुलूस बगल से निकला जिसके पीछे नंगे साधुओं की दो लम्बी पंक्तियाँ चल रही थीं। एक साधु काँटों की शैया के ऊपर लेटा था। और इस तरह के और भी उत्कट संन्यासी थे, जो सभ्य संसार में बहुत कम दीखाई देते हैं। और स्वाभाविक था कि हिन्दुओं के विभिन्न सम्प्रदायों की वहाँ बाढ़-सी आ जाए। उनके भजन-कीर्तन की ध्वनि-लहरियाँ हवा में ऊपर उठकर सवेरे के कुहरे में घुल-मिल रही थीं और दस हजार धूनियों से निकलता धूआँ तम्बुओं के नगर के ऊपर बादलों की तरह आकाश को आच्छादित कर रहा था।

• • •

अगले दिन सवेरे जब प्रभुपाद इस्कान केम्प में पहुँचे, तो भक्त भावविभोर हो गये। वे उनसे उत्साहपूर्वक मेले के विचित्र दृश्यों का वर्णन करने लगे। एक ने हाथी पर सवार एक

गुरु की चर्चा की और प्रभुपाद से कहा, "वास्तव में हाथी पर आपको सवारी करनी चाहिए।"

"नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "मैं हाथी पर राधा और कृष्ण को आसीन करूँगा।"

प्रभुपाद की उपस्थिति से शिष्यों में फिर से ढाढ़स बंधा। उन्हें याद आया कि आध्यात्मिक जीवन न तो मोहक है, न विस्मयकारी, वरन् वह सामान्य और व्यावहारिक है। प्रभुपाद के आने से भक्तों में रहस्यमय योग, वैदिक कर्मकाण्डों और सांसारिक आशीर्वादों और वरदानों के प्रति जो आकर्षण थे, वे समाप्त हो गये। वे मानने लगे कि मेले में आये तीर्थयात्रियों को महान् आध्यात्मिक लाभ मिलेगा; लेकिन जैसाकि प्रभुपाद ने कहा था, "पवित्र स्थान में जाने का तात्पर्य यह है कि किसी पवित्र पुरुष को खोजा जाये और उसके उपदेश सुने जायें। कोई स्थान पवित्र इसीलिए होता है कि वहाँ साधुजनों की उपस्थिति होती है।" इसलिए भक्तों की समझ में आ गया कि सबसे बड़ा आध्यात्मिक लाभ इसी में है कि श्रील प्रभुपाद को सुना जाये।

शिष्यों के साथ अपने तम्बू में बैठे हुए प्रभुपाद ने अर्ध कुंभ-मेला के महत्त्व की व्याख्या की। उन्होंने कहा कि लाखों वर्षों से यह स्थान भारत के सबसे पवित्र स्थानों में रहा है। भगवान् के कच्छप अवतार के समय जब दैत्य और देवता सागर मथकर अमृत निकाल रहे थे, तो उसकी एक बूँद यहाँ गिरी थी। तभी से हर छठे और बारहवें वर्ष, कुछ शुभ ग्रहों द्वारा अमृतपूर्ण कुंभ का निर्माण होता है और कहा जाता है कि उस कुंभ से अमृत की बूँदें त्रिवेणी पर गिरती है। भगवान रामचन्द्र और हनुमान का आगमन इलाहाबाद हुआ था और यहीं भगवान् चैतन्य ने रूप गोस्वामी को भाव-भक्ति की शिक्षा दी थी। प्रभुपाद ने बताया कि वे भी अपनी पत्नी और परिवार के साथ इलाहाबाद में रहे थे और श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने इलाहाबाद के रूप गोस्वामी गौड़ीय मठ में १९३२ ई. में उन्हें दीक्षा दी थी। जहाँ तक मेलों का सम्बन्ध है, जो कोई भी व्यक्ति शुभ अवसरों पर, जब स्वर्ग से प्राण नीचे को प्रवाहित होता है, यहाँ आता है और स्नान करता है, वह स्वर्गलोकों में पहुँच जाता है या मुक्ति प्राप्त करता है।

जान ग्रीजर : *मैंने अन्य तथाकथित गुरुओं से बात की और उन्हें अत्यन्त निराकारवादी पाया। उन्हें व्यक्तियों की, विशेषकर पाश्चात्यों की कोई परवाह नहीं थी। पाश्चात्यों को वे पसन्द नहीं करते थे, एक तरह से उनसे घृणा करते थे, यद्यपि कभी-कभी कुछ के पास पाश्चात्य शिष्य थे। प्रभुपाद बिल्कुल ही भिन्न थे। उन्हें बाहरी रूप-रंग की कोई चिन्ता नहीं थी, उन्हें ध्यान था तो किसी व्यक्ति की दार्शनिक विचारधारा, उसकी चेतना का था। और वे हर व्यक्ति में, जिससे उनकी भेंट होती थी, कृष्णभावनामृत भरने की कोशिश करते थे।*

प्रभुपाद ने बताया कि यद्यपि मेले में बहुत से उपस्थित संत और साधु अधिकतर

अप्रामाणिक थे, पर उनमें बहुत-से सच्चे योगी भी थे और कुछ तो तीन या चार सौ वर्ष की आयु के थे। ये योगी भारत के सुदूर भागों से मेले के लिए आते थे, और फिर एकान्त वास के लिए वापस चले जाते थे। "मैंने स्वयं देखा है," प्रभुपाद ने कहा कि, "वे गंगा में स्नान करने के लिए डुबकी लगाते हैं और सात पवित्र नदियों से ऊपर निकलते हैं। वे गंगा में गोता लगाते हैं और गोदावरी नदी से निकलते हैं। तब वे फिर गोता लगाते हैं और कृष्णा नदी से निकलते हैं। और फिर गोता लगाते हैं, और निकलते हैं।" इसलिए भक्तों को उन सभी का सम्मान करना चाहिए, जो मेले में आये थे।

"तो क्या यह वास्तव में सच है," एक भक्त ने पूछा "कि, यहाँ स्नान करने मात्र से उनकी मुक्ति हो जाती है?"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "यह सच है। वे यहाँ मुक्ति के लिए आते हैं। किन्तु हम मुक्ति के लिए नहीं आये हैं। हम धर्मोपदेश के लिए आये हैं। कृष्ण की विशुद्ध भाव-भक्ति में लीन होने के कारण हम पहले से ही मुक्त हैं। हमारी रुचि मोक्ष में नहीं है। हम भाव-भक्ति का उपदेश देने आये हैं।"

• • •

जब प्रभुपाद अगले दिन सवेरे उठे, तो तापमान हिमांक के निकट था। उनके केम्प को गरम करने का साधन नहीं था। वे मंगल-आरती पर कीर्तन का नेतृत्व करने के लिए पंडाल में पहुँचे और जब वे व्यास-आसन पर बैठे, तो एक शिष्य ने उन्हें एक लिहाफ दिया, जिसे उन्होंने अपनी चारों ओर लपेट लिया। इतने सवेरे उठना और इतने ठंडे जल में स्नान करना अधिकतर भक्तों के लिए कठिन था। कुछ गंगा में स्नान करने जाते थे, दूसरे पास के नल पर नहा लेते थे, और कुछ उठते ही नहीं थे।

गिरिराज : *कार्यक्रम बहुत कठोर था, क्योंकि रात में बहुत ठंडक होती थी और हमसे आशा की जाती थी कि हम सवेरे चार बजे उठ जायें, स्नान करें और मंगल आरती में सम्मिलित हों। सो, तमाल कृष्ण और हंसदूत जैसे कुछ बहुत पक्के भक्त सवेरे तीन या साढ़े तीन बजे उठ जाते थे और केम्प से गंगा तक की पूरी दूरी तय करके प्रातः स्नान करते थे। लेकिन हम में से जो ब्रह्मचारी खेमे में रहते थे, वे इतने पक्के नहीं थे और चार बजे जब सामान्य रूप से उठने का समय होता, तब इतनी ठंड होती कि हमें अपने स्लीपिंग बैग में ही पड़े रहना पसन्द होता था।*

प्रभुपाद यह भी देख रहे थे कि हममें से कुछ मंगल आरती में देर से पहुँचते थे और कुछ जाते ही नहीं थे। प्रभुपाद को इस पर बहुत चिन्ता होने लगी, क्योंकि वे जानते थे कि मंगल आरती का हमारे लिए कितना बड़ा महत्त्व था। इसलिए एक दिन सवेरे ही, यद्यपि

उनका स्वास्थ्य कुछ अच्छा नहीं था, वे चार बजे उठ गये और अपना गमछा पहनकर बाहर निकले और नल के नीचे बैठकर तड़के ही बर्फ जैसे ठण्डे जल से स्नान करने लगे। उनका उद्देश्य केवल हमें उठने, स्नान करने और मंगल आरती में आने के लिए प्रोत्साहित करना था। इसका हम सब पर भारी प्रभाव हुआ और हम इतने लज्जित हुए कि इसके बाद देर तक सो ही नहीं सकते थे।

कीर्तन के बाद प्रभुपाद ने अजामिल की कहानी जारी रखते हुए, *श्रीमद्भागवत* पर व्याख्यान दिया। यह विशेष कहानी, जिसमें भगवान् के पवित्र नाम का गुणगान था, विशेष रूप से सुसंगत लगती थी। पवित्र नाम इतना शक्तिशाली था कि केवल एक बार उसका उच्चारण करने से अजामिल को मुक्ति मिल गई। इसलिए भगवान् के नाम का जप, स्वर्ग से आनेवाले प्राण से कहीं अधिक लाभकारी था।

प्रात:काल आया और आकाश में प्रकाश फैल गया—किन्तु बहुत धीमा। नदी का आर्द्र, भारी कुहरा, जिसमें धूनियों से उठा हुआ धुआँ मिला था, सर्वत्र छाया रहा। वर्षा होने लगी। भक्त ऐसे मौसम के लिए तैयार नहीं थे। खाद्यान्नों का मिलना और उन्हें पकाना कठिन हो रहा था, शौचालय की सुविधाएँ बिलकुल ही अपरिष्कृत थीं, ऐसी हालत में भक्तों की समझ में नहीं आ रहा था कि वे दो सप्ताह की निर्धारित अवधि वहाँ कैसे बिताएँगे।

किन्तु प्रभुपाद, जो अपने शिष्यों के साथ सारी कठिनाइयाँ झेल रहे थे, आध्यात्मिक और प्रत्यक्षत: अप्रभावित बने रहे। यदि सूर्य बादलों से बाहर निकलता, तो धूप में बैठकर वे मालिश कराते। तब गमछा पहनकर वे स्नान करते, लोटे को गंगा के गरम हुए जल में डुबोते और उसे अपने शरीर पर डालते। वे इतने सन्तुष्ट थे कि भक्तों में भी साहस आ गया। प्रभुपाद कोई शिकायत नहीं कर रहे थे, तो भक्त क्यों करें?

बहुत सवेरे प्रभुपाद भक्तों को कीर्तन करने के लिए बाहर ले गये। वे अपनी भूरी ऊनी चादर ओढ़े थे, सिर पर स्वामी हैट था, जिसकी पट्टी ठुड्डी में बँधी थी। उनके शिष्य गरम से गरम कपड़े, जो उनके पास थे, पहने हुए थे—स्वेटर, हैट, चादर, आदि। प्रभुपाद अपने दल को घनी आबादी वाले तम्बुओं के नगर में घुमाते-फिराते ले जा रहे थे। कीर्तन अन्य तीर्थयात्रियों के लिए प्रसन्नता का विषय था। क्या व्यंग्य की बात है कि योगियों, संन्यासियों, नंगे साधुओं और इस तरह के अन्य व्यक्तियों की आकर्षक भीड़ में सबसे बड़ी सनसनी प्रभुपाद और उनके शिष्यों ने पैदा की!

और वे धर्मोपदेश दे रहे थे। यद्यपि अन्य दल मंत्रोच्चारण कर रहे थे या अपने तम्बुओं में व्याख्यान दे रहे थे, लेकिन जो प्रभुपाद का दल कर रहा था, उसके समान कुछ भी नहीं हो रहा था। संकीर्तन करने वाला वह अकेला दल था और हर एक उसका स्वागत कर रहा

था। राजसी और प्रसन्न प्रभुपाद के नेतृत्व में जुलूस में वृद्धि होती गई—और हरे कृष्ण गाने में पाश्चात्यों के साथ भारतीय लोग शामिल हो गये।

प्रभुपाद भक्तों को प्रतिदिन सवेरे संकीर्तन के लिए भेजते थे। जब कीर्तन-दल एक तम्बू से दूसरे तम्बू तक जाता, तो बहुत-से तीर्थयात्री भागकर उसके पास आते, उसे साष्टांग प्रणाम करते, धन देते और उसके प्रति सम्मान प्रकट करते। मधुद्विष, दीनानाथ और हंसदूत जैसे मजबूत और अनुभवी सार्वजनिक-ढोलकियों और कीर्तनियों के नेतृत्व में कीर्तन करते हुए भक्तजनों को ठंड और सारी कठिनाइयाँ भूला जातीं।

प्रभुपाद ने जप के महत्त्व पर बल दिया; उन्होंने कहा कीर्तन हमेशा होना चाहिए। ऐसे समारोहों में दर्शन और भाषण प्रभावशाली नहीं होते, क्योंकि आम जनता इन्हें नहीं समझ पायेगी। भगवान् चैतन्य ने कभी सार्वजनिक भाषण नहीं दिया, किन्तु कीर्तन उन्होंने हमेशा कराया।

भक्तों के कीर्तन के कारण राधा-कृष्ण के अर्चाविग्रहों के दर्शन और प्रसाद पाने के लिए हजारों लोग इस्कान के पंडाल में आते थे। पूरे मेले में कृष्ण की मूर्ति केवल इस्कान के पास थी, और हजारों लोग उसके दर्शन के लिए वहाँ पंक्ति में खड़े होते थे। प्रभुपाद सवेरे अंग्रेजी में बोलते थे और रात को हिन्दी में और सायंकाल पंडाल में उनके कीर्तन को बड़ी सफलता मिली। महिलाओं और एक छोटे बच्चे के साथ पाश्चात्य साधुओं को देखने के लिए लोग बहुत उत्सुक रहते।

प्रभुपाद ने बड़े पैमाने पर प्रसाद-वितरण की भी व्यवस्था की, और उन्होंने रेवतीनन्दन और उसके कुछ सहायकों को रसोई-घर में लकड़ी जलाने वाले दो छोटे चूल्हों पर लगातार प्रसाद तैयार करने का काम सौंपा। किसी-किसी रात में भक्त सात सौ लोगों तक के लिए सब्जी और हलवा या सब्जी और पूड़ियाँ तैयार करते। मेले पर इस्कान का जो प्रभाव पड़ा, उससे प्रभुपाद प्रसन्न थे।

> इस बीच भारत-भ्रमण का हमारा कार्यक्रम चल रहा है। हम जहाँ भी आमंत्रित होते हैं, हमें सफलता मिलती है। इस समय हम प्रयाग (इलाहाबाद) के अर्ध कुंभ मेला में आये हैं और यहाँ के विशाल जनसमूह में जितने दल आये हैं, उन सब में हमारी प्रधानता निर्विवाद है।

• • •

अजामिल पर प्रभुपाद के व्याख्यान से उन भक्तों में जान आ गई, जो ठंड या कभी कभई बीमारी से परेशान होते थे। प्रभुपाद को सुनने का यह अवसर उनके सारी मेहनत का

पुरस्कार था। हर दिन सवेरे के व्याख्यान में प्रभुपाद शुद्ध मन से पवित्र नाम का जप करने के महत्त्व पर बल देते रहे।

"शुद्ध मन से हरिनाम जपने का तात्पर्य यह है कि आप ज्योंही कृष्ण के पवित्र नाम का जप करते हैं, त्योंही आप कृष्ण का रूप देखते हैं, कृष्ण के गुणों को अनुभव करते हैं, कृष्ण की लीलाओं का स्मरण करते हैं। यही हरे कृष्ण मंत्र का शुद्ध जप है। श्रील जीव गोस्वामी की व्याख्या में यही कहा गया है कि एक सच्चा भक्त, जो हरे कृष्ण मंत्र का जप करता है, उसे नाम, रूप, गुण, लीला की तुरन्त अनुभूति होती है। अर्थात् कृष्ण के विषय में हर चीज की, केवल नामों को जपने से। आप कृष्ण के रूप को अनुभव करेंगे, आप उनके सभी गुणों को स्मरण करेंगे—'ओह, कृष्ण इतने गुणवान् हैं, वे इतने उदार हैं।' तब आप उनकी लीलाओं का स्मरण करेंगे—ओह, कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया। कृष्ण ने अपने गोप-सखाओं के साथ क्रीड़ा की। कृष्ण ने गोपियों से मधुर वार्तालाप किया; माँ यशोदा से वार्तालाप किया।' ये चीजें आपको स्मरण आयेंगी। जप की यह वास्तविक सिद्धि परिणति है।"

प्रभुपाद ने इस बात को दुहराया कि अपने शिष्यों के साथ मेले में उनके आने का एकमात्र कारण यह था कि वे भगवान् कृष्ण का गौरवगान करना चाहते थे, जिससे कृष्णभावनामृत आन्दोलन का महत्त्व दूसरों की समझ में आ जाये। किन्तु यदि भक्त कृष्णभावनामृत दूसरों को सफलतापूर्वक देना चाहते थे, तो पहले उन्हें स्वयं को कृष्ण की अनुभूति होना जरूरी था। उन्होंने कहा कि कृष्ण का सतत चिन्तन सम्भव था। उन्होंने सिर पर जल के घड़े ले जाने वाली भारतीय महिलाओं का दृष्टान्त दिया। जिस तरह वे सारी अन्य गतिविधियों के बावजूद संतुलन बनाए रखना सीख गई हैं, उसी तरह एक भक्त को भी सारे कार्यकलापों और मानसिक क्षोभों के बावजूद कृष्ण को हमेशा स्मरण रखना चाहिए। और कृष्ण को स्मरण रखने का सर्वोत्तम उपाय कृष्ण के पवित्र नाम के सदैव जप का अभ्यास है।

"मुझे याद है कि हमारे स्कूल के एक अध्यापक शिक्षा देते थे कि यदि तुम हमेशा सोचते रहोगे कि 'मैं अपनी परीक्षा विशेष योग्यता के साथ पास करूँगा,' तब तुम अपनी परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करोगे। यदि तुम सोचोगे कि, 'मैं परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करूँगा,' तब शायद तुम तृतीय श्रेणी में पास होगे। और यदि तुम सोचोगे कि, 'मैं अपनी परीक्षा किसी तरह तृतीया श्रेणी में पास कर लूँगा' तब तुम फेल हो जाओगे। इसका तात्पर्य यह है कि यदि तुम अपनी योग्यता से अधिक की आशा करोगे, तो सम्भव है कि परीक्षा में तुम पास हो जाओ। इसलिए हरे कृष्ण मंत्र का जप करते समय महाप्रभु चैतन्य ने कहा है कि यह नहीं कि तुम केवल एक घंटा जप करो—नहीं। आपको अभ्यास करना चाहिए,

और अभ्यास कैसे करना चाहिए, यह हरिदास ठाकुर ने दिखाया था (जो प्रतिदिन लगभग चौबीस घंटे जप करते थे), किन्तु चूँकि हम ऐसा नहीं कर सकते, इसलिए हमें सदैव कृष्ण की सेवा में लगे रहना चाहिए। इससे हमें कृष्ण का स्मरण बना रहेगा।"

प्रभुपाद ने कहा कि हरे कृष्ण कीर्तन सिंह की दहाड़ की तरह है। जैसे सिंह की दहाड़ सभी छोटे जीवों को डरा देती है, उसी तरह हरे कृष्ण कीर्तन से सभी पापमय कार्यों के फल समाप्त हो जाते हैं। किन्तु उन्होंने भक्तों को बार-बार चेतावनी दी कि वे पवित्र नाम के बल पर पापमय कर्म करने की सबसे भयानक गलती न करें।

"पर यदि आपका पतन भी हो जाता है, तो भी कोई हानि नहीं है। नारद का यही कथन है। यदि कोई कृष्ण का अनुगामी सच्चे दिल से बनता है और उनकी भाव-भक्ति करता है और फिर दोबारा अध:पतित हो जाता है, तो उसका फिर उद्धार हो जाएगा। ठीक इस तरह का हमारा व्यावहारिक अनुभव है। हमारे कुछ शिष्यों का पतन हो गया है। लेकिन उन्होंने निष्ठापूर्वक जो भी भक्ति की है, वह उनके खाते में स्थायी रूप से दर्ज है। और एक दिन अजामिल की तरह उनका उद्धार होगा।"

• • •

प्रभुपाद के इलाहाबाद-अधिवास के अन्तिम दिन एक श्रीमान् गौरकिशोर उनके केम्प में उनसे मिलने आये और उन्हों ने बनारस आने का आमंत्रण दिया। भगवान् चैतन्य के बनारस आने के ४५६ वें वार्षिक स्मरणोत्सव के अध्यक्ष के रूप में श्रीमान् गौरकिशोर की इच्छा थी कि प्रभुपाद उत्सव के सम्मानित अतिथि के रूप में उसमें सम्मिलित हों। जब प्रभुपाद ने कहा कि वे अस्वस्थ अनुभव कर रहे थे और उनके स्थान पर उनके कुछ शिष्य जा सकते थे, तो श्रीमान् गौरकिशोर आग्रह करने लगे जब तक कि अन्त में प्रभुपाद जाने को राजी नहीं हो गये। परन्तु प्रभुपाद पहले गोरखपुर जाना चाहते थे।

• • •

गोरखपुर,
फरवरी ३, १९७१

अर्ध कुंभ मेले के समाप्त होने पर कुछ भक्त दिल्ली चले गये, कुछ बम्बई और अन्य कलकत्ता। प्रभुपाद और शेष शिष्य गोरखपुर गये और पुरानी छोटी लाइन पर दस घंटे की रेल-यात्रा के बाद वहाँ पहुँचे। प्रभुपाद को जाने का आमंत्रण उनके वहाँ के एकमात्र शिष्य डॉ. आर.पी. राव (अब रामानन्द) से मिला था। डॉ. राव रसायन विज्ञान में शोध कर रहे थे और प्रभुपाद से सैन फ्रांसिस्को में मिले थे, १९६७ में उनसे दीक्षा ग्रहण की थी और

बाद में चार बच्चों के अपने परिवार में भारत लौट आये थे और इस समय गोरखपुर विश्वविद्यालय में रसायन शास्त्र का अध्यापन कर रहे थे।

प्रभुपाद और उनके शिष्य रामानंद के छोटे-से जन-संकुल मकान पर पहुँच गये और उस दिन शाम को लगभग एक सौ व्यक्ति प्रभुपाद के व्याख्यान में सम्मिलित हुए। प्रभुपाद की योजना गोरखपुर विश्वविद्यालय के अहाते में एक राधा-कृष्ण मन्दिर बनाने की और उसके बी.ए., एम.ए. तथा पीएच.डी. डिग्री के पाठ्यक्रम में कृष्णभावनामृत का अध्ययन शामिल कराने की पहले से ही थी। वे उस दिन की कल्पना करते थे जब स्नातक कृष्णभावनामृत पढ़ाने के लिए संसार-भर में स्कूलों, कालेजों और मन्दिरों में जायेंगे। उन्होंने रामानंद और उनके मित्रों के एक दल को प्रेरित किया कि विश्वविद्यालय में कृष्णभावनामृत का प्रवेश कराने के लिए वे एक समिति बनाएँ। प्रभुपाद ने लगभग एक दर्जन शिष्य दीक्षित किये। चूँकि उन लोगों ने स्वीकार किया कि वे अवैध यौनाचार, मादक-द्रव्य-सेवन और द्यूत-क्रीड़ा से परहेज के नियमों का पालन कर रहे थे और आजीवन निरामिष-भोजी थे, इसलिए प्रभुपाद ने छह मास के परीक्षण के सामान्य नियम से उन्हें मुक्त कर दिया। प्रभुपाद ने उनसे प्रतिदिन सोलह मालाएँ जप करने और अपने नगर को कृष्ण-चेतन बनाने को कहा। उन्होंने कहा कि उनकी अनुपस्थिति में शिष्यों को चाहिए कि वे रामानंद के घर को सक्रिय इस्कान केन्द्र बनाए रखें और विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में कृष्णभावनामृत का अध्ययन शामिल कराने का प्रयत्न करें।

• • •

बनारस
फरवरी ६, १९७१

श्रीमान् गौरकिशोर को निकट में होने वाले समारोह में प्रभुपाद के सम्मिलित होने से बड़ी आशाएँ थीं। भगवान् चैतन्य के बनारस आगमन के स्मरणोत्सव के एक सप्ताह तक चलने वाले समारोह का चरमोत्कर्ष एक जुलूस था और गौरकिशोर ने बताया कि प्रभुपाद और उनके शिष्यों की इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। प्रभुपाद और उनके 'विदेशी शिष्यों' की शहर में उपस्थिति का प्रचार समाचार-पत्रों के लेखों, इश्तिहारों और लाउड-स्पीकर से लैस गाड़ियों द्वारा किया जा चुका था। भक्तों की समझ में यह बात आ गई कि उनका उपयोग मनोरंजनकर्ताओं की तरह हो रहा था, वे मानो ठेके पर कार्य कर रहे हों—लेकिन बिना वेतन के।

जुलूस के दिन प्रभुपाद एक चाँदी जैसी रूपहली गाड़ी में सवार हुए, ऐसी गाड़ी में जो आमतौर से बारात के फिजूलखर्च जुलूसों में इस्तेमाल होती है। गाड़ी दो सफेद घोड़ों

द्वारा खींची जा रही थी, जो रूपहले मुकुट पहने थे और जिन पर अलंकृत चादरें लिपटी थी। जुलूस की सबसे आगे की गाड़ी पर भगवान् चैतन्य की नीम की पीली लकड़ी से बनी हुई एक छह फुट की मूर्ति रखी थी। उसके पीछे सजे हुए हाथियों की एक पंक्ति थी। एक हाथी के ऊपर एक पताका थी, जिस पर अंकित था—*हरेर्नाम एव केवलम्।* एक हाथी पर राम और सीता के रूप में दो अभिनेता बैठे थे, दूसरे पर राधा और कृष्ण के वेश में दो अन्य अभिनेता थे, जो दर्शकों की ओर हाथ हिला रहे थे। उसके पीछे के एक हाथी पर भगवान् चैतन्य और उनके पार्षदों का संकीर्तन करता हुआ एक चित्र था। उसके पीछे सजा हुआ एक चौरस ट्रक चल रहा था, जिस पर भगवान् चैतन्य और भगवान् नित्यानंद का अभिनय करते हुए बच्चे नाच-गा रहे थे। अन्त में व्यावसायिक कीर्तनियों के कई दल और प्रभुपाद के 'विदेशी शिष्य' थे, जो नृत्य और कीर्तन कर रहे थे।

भक्तों के पीछे प्रभुपाद अपने रथ में सवार थे। उनके दोनों ओर एक-एक भक्त उन्हें चामर डुलाता चल रहा था; प्रभुपाद अपना दाहिना हाथ माला की थैली में डाले थे और बाएं हाथ में छड़ी लिए बैठे थे। वे रेशमी वस्त्र पहने थे और उनके कुर्ते में मोती के बटन लगे थे। उनके मस्तक पर चंदन का चौड़ा टीका लगा था। वे न तो दर्शकों की ओर हाथ हिला रहे थे, न मुसकरा रहे थे और न उनकी ओर देख रहे थे, वरन् शान्त बैठे थे और माला फेरते हुए हरे कृष्ण जप रहे थे।

प्रभुपाद की गाड़ी के पीछे एक शहनाई-दल चल रहा था। उसके बाद कई अन्य कीर्तन-दल थे और अन्त में भगवान् चैतन्य की एक अन्य मूर्ति थी, जिसे आठ व्यक्ति उठाये हुए थे।

उत्सव-समिति का कहना था कि जुलूस में तीन लाख लोग शामिल हुए थे। यह उस संख्या से दुगुनी थी, जो प्रभुपाद और उनके विदेशी शिष्यों के जुलूस में न आने पर होती। अब जुलूस समाप्त हो गया था। उसके सर्वाधिक आर्कषण के रूप में प्रभुपाद उसमें सम्मिलित हुए और बड़ी संख्या में उन्होंने लोगों को उसमें शामिल कराया और अब कुछ करना शेष नहीं रह गया था। प्रभुपाद को थकान अनुभव हो रही थी। उन्हें और उनके शिष्यों को पास की धर्मशाला में ले जाया गया और उन्हें भोजन कराया गया। प्रभुपाद गम्भीर बने रहे और यथाशीघ्र वे अपने आवास को लौट गये और अपने नियमित कार्यक्रम में लग गये।

• • •

बनारस विश्वविद्यालय का एक छात्र, जो प्रभुपाद से इलाहाबाद-मेला में मिल चुका था, उनसे मिलने के लिए वहाँ रुक गया। छात्र के पिता ने प्रभुपाद को भेंट करने के लिए

भगवान् चैतन्य का एक जीवन-चरित भेजा था और जब उसने प्रभुपाद को अपने पिता का चित्र दिखाया तो वे बोले, "हाँ, तुम्हारे पिता भक्त हैं, तुम भी दीक्षा क्यों नहीं ले लेते?"

लड़का हिचकिचा रहा था। जब प्रभुपाद के साथ वह बगीचे में घूम रहा था, तो प्रभुपाद ने कहा, "भक्ति का बीज तुमने पिता से प्राप्त किया है, इसलिए तुम्हें उसका पोषण करना चाहिए।"

"किन्तु मैं अपना सिर कैसे मुंडा सकता हूँ?" लड़के ने पूछा, "मैं विश्वविद्यालय का छात्र हूँ।"

"नहीं, यह एक परिपाटी है। तुम्हें एक बार मुंडा लेना चाहिए, और तब तुम छोटे बाल रख सकते हो।"

"पर मैं तिलक कैसे लगाऊँगा? लोग मुझ पर हँसेंगे।"

प्रभुपाद ने कहा कि तुम्हें आलोचना का भय नहीं होना चाहिए। तुम्हें कृष्ण का एक सैनिक बनना चाहिए। जैसे सरकार अपने बहादुर सैनिकों को सम्मान देती है, उसी तरह कृष्ण अपने उस भक्त को पुरस्कृत करते हैं, जो उनके लिए कठिनाइयाँ और आलोचना सहन करता है।

"गुरु-दक्षिणा का क्या होगा?" लड़के ने पूछा।

"गुरु-दक्षिणा केवल एक औपचारिकता है," प्रभुपाद ने कहा, "प्राचीन काल में यह प्रथा थी कि जब कोई दीक्षा लेता था, तो वह घर-घर जाता था। यह इस बात का लक्षण था कि वह गुरु का सेवक हो गया है और उनके लिए घर-घर भिक्षा माँगने के लिए तैयार था। कोई जो कुछ देना चाहे, दे दे।"

लड़का घर लौटा और उसने अपने पिता को बताया। उसके पिता ने कहा कि अगला दिन शुभ दिन था—वह भगवान् नित्यानंद के आविर्भाव का दिन था। आध्यात्मिक दीक्षा के लिए वह अच्छा दिन था।

अतएव अगले दिन, नित्यानंद त्रयोदशी पर श्रील प्रभुपाद ने लड़के को दीक्षित किया और उसे निरंजन दास नाम दिया। जब प्रभुपाद ने निरंजन से पूछा कि क्या उसे कुछ पूछना है, तो निरंजन ने कहा कि वह कृष्ण के साथ अपने शाश्वत सम्बन्ध को जानना चाहता था; वह सम्बन्ध सेवक का था, मित्र का था या पिता का था?

प्रभुपाद ने उत्तर दिया कि भगवान् कृष्ण के साथ दिव्य सम्बन्धों का सामान्य आधार उनके प्रति दासता थी। "हरे कृष्ण" जपकर निरंजन उत्तरोत्तर पवित्र होता जायेगा और कृष्ण के साथ सम्बन्ध की अधिकाधिक अनुभूति उसे होती जायेगी। निरंजन ने पूछा कि वह अपने सम्बन्ध को समझेगा कैसे?

"नहीं, जल्दी न करो," प्रभुपाद ने कहा, "अपने पिता से तुम्हें कुछ श्रद्धा प्राप्त हुई

है, और अब तुम भक्तों के संसर्ग में आ रहे हो और जप कर रहे हो। धीरे-धीरे तुम्हें अनुभूति हो जायेगी।"

निरंजन धैर्य रखने को राजी हो गया।

प्रभुपाद ने निरंजन से विश्वविद्यालय में उनके एक व्याख्यान की व्यवस्था करने को कहा, और निरंजन ने अपने चाचा की सहायता से, जो दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक थे, प्रभुपाद के भाषण का कार्यक्रम उनके बनारस अधिवास के अन्तिम दिन सवेरे निश्चित करा दिया।

जिस दिन प्रभुपाद बनारस से चल रहे थे, उनकी भेंट अमेरिकन फोटोग्राफर जान ग्रीजर से हुई, जो उनके और उनके दल के साथ सुरत से यात्रा कर रहा था। जान, जिसने अपनी मूँछ मुंडा दी थी और अपने भविष्य के विषय में बहुत आशावान् था, प्रभुपाद को विदा देने आया—बम्बई तक जहाँ कुछ सप्ताह बाद उनकी भेंट फिर होने वाली थी।

जान को प्रभुपाद आँगन में धूप का आनन्द लेते और एक मिट्टी के पात्र से खजूर का गुड़ खाते मिले। प्रभुपाद ने कहा कि पात्र तोड़ दिया जाये और जान और वहाँ उपस्थित भक्तों में बाँट दिया जाये, और जब जान मिट्टी के पात्र के एक टुकड़े से गुड़ चाटता हुआ बैठा था, तो प्रभुपाद कलकत्ता में बिताये अपने बचपन के बारे में बताने लगे।

जान : *प्रभुपाद अपने उच्चारण से लययुक्त अंग्रेजी में कलकत्ता में अपने बचपन के दिनों के बारे में बता रहे थे, और उन्होंने आज की भीड़-भाड़ और गंदगी से पहले वाले कलकत्ता का एक शिष्ट नगर के रूप में वर्णन किया। अपने स्कूल के दिनों में वे सफेद संगमरमर से बनी शानदार विक्टोरिया-कालीन इमारतें देख चुके थे, जो चारों ओर राजसी लानों और वृक्षों से घिरी होती थीं।*

अचानक प्रभुपाद ने मेरी ओर देखा और वे हँसने लगे, "तो जान," उन्होंने कहा, "मैं समझता हूँ कि कृष्ण ने तुम्हें वश में कर लिया है।" मैंने सहमति प्रकट की। मुझे काफी समय से यह मालूम था, किन्तु प्रभुपाद ने उसकी पुष्टि अब की।

• • •

जब प्रभुपाद बनारस से गोरखपुर ट्रेन से लौट रहे थे, तो उनके बहुत-से शिष्य गलत स्टेशन पर पहुँच गये। जब प्रभुपाद और उनके कुछ अनुयायी सही स्टेशन पर प्रतीक्षा कर रहे थे, तो कौशल्या ने उनसे पूछा, "आपको बनारस में कैसा लगा, श्रील प्रभुपाद?"

"ठीक है," उन्होंने उदासीनता से कहा।

"क्या आपको अच्छा आराम मिला?" उसने बनारस-अधिवास की सार्थकता के बारे में सोचते हुए पूछा।

"आराम मैं कभी भी कर सकता हूँ," प्रभुपाद बोले, "किन्तु मैं अपने भक्तों के साथ रहना चाहता हूँ।"

सामान से घिरे हुए प्रभुपाद एक बेंच पर बैठे थे, जबकि तमाल कृष्ण और श्यामसुन्दर टिकट घर से गाड़ी तक इधर उधर दौड़-भाग कर रहे थे। गाड़ी शीघ्र जाने वाली थी। लेकिन अन्य भक्त कहाँ थे? प्रभुपाद देखते रहे और उनके शिष्य गाड़ी के कंडक्टर से बहस में लगे थे कि ट्रेन तब तक नहीं जा सकती थी जब तक अन्य भक्त न आ जायें "वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं," प्रभुपाद ने हंसते हुए कहा।

• • •

गोरखपुर
फरवरी १०, १९७१

यह सुनकर कि प्रभुपाद गोरखपुर में धर्मोपदेश करना चाहते हैं, गीता प्रेस प्रकाशन संस्थान के सुविख्यात अध्यक्ष, हनुमान प्रसाद पोद्दार अपना पुराना दो-मंजिला मकान, जिसका नाम कृष्ण निकेतन था, उन्हें देने को तैयार हो गये। श्रीमान् पोद्दार जो गोरखपुर के एक अन्य मकान में शैयाग्रस्त थे, प्रभुपाद से पहली बार १९६२ में मिल चुके थे और वे प्रभुपाद के मिशन की सराहना करते थे।

जब प्रभुपाद को कृष्ण निकेतन इस्तेमाल करने की अनुमति मिल गई, तो उन्होंने तेजी से काम किया। उन्होंने कहा कि यह ठीक नहीं था कि राधा-कृष्ण की मूर्तियाँ जो वे कलकत्ता से लाए थे, अर्धकुंभ मेला के बाद एक ट्रंक में बन्द रखी रहें। उनकी आराधना हो चुकी थी, इसलिए उस आराधना को बन्द नहीं करना चाहिए। "मूर्तियों की स्थापना कल होनी है।" वे बोले, और उन्होंने कौशल्या और नन्दकुमार को स्थापना की तैयारियों का भार सौंप दिया।

यह देखकर कि नन्दकुमार और कौशल्या को और अधिक सहायता चाहिए, उन्होंने अपने सभी शिष्यों को बुला भेजा और शीघ्र ही उनके बीस अमरीकी शिष्य अगले दिन के उत्सव की तैयारी में भाग-दौड़ करने लगे। प्रभुपाद ने मन्दिर-कक्ष की छत से फर्श तक की सफाई में और वेदिका बनाने में शिष्यों का मार्गदर्शन किया। उन्होंने हिमावती से अपनी सब से अच्छी साड़ी देने को कहा, जिसे उन्होंने उस मेज के सामने परदे की तरह टाँग दिया, जिसे श्रीविग्रहों की वेदिका के रूप में काम में लाना था। प्रभुपाद ने कहा कि वेदिका के लिए एक पृष्ठपट चाहिए था, और मेज पर खड़ी कौशल्या को उन्होंने कपड़ों के रंगीन टुकड़े दीवार पर सजाने के लिए दे दिए। पृष्ठपट के लग जाने पर प्रभुपाद ने एक कम्बल लिया, जो एक भक्त ने इलाहाबाद में खरीदा था और उसे मेज की वेदिका पर

बिछा दिया।

रात में प्रभुपाद ने मन्दिर–कक्ष का सर्वेक्षण किया। "ओह! यह बहुत अच्छा है।" उन्होंने कहा। वे अपने कमरे में चले गये और दो भक्त रात–भर राधा–कृष्ण के लिए नया पहनावा सीने में लगे रहे। अगले दिन सवेरे वेदिका पर अर्चाविग्रहों की स्थापना हो गई और भक्तों ने उनकी आराधना शुरू कर दी। दिनभर में वे छह बार उनकी आरती करते और प्रसाद चढ़ाते थे।

भारत में आने के बाद पहली बार भक्त एक इस्कान मन्दिर के वातावरण में रह रहे थे और उनका जीवन नियमित और सुरक्षित हो गया था। मौसम में गरमी आने लगी थी। बहुत–से भक्तों को इससे बड़ी राहत हुई, जिनका स्वास्थ्य इलाहाबाद में बिगड़ गया था। गोरखपुर का इस्कान मन्दिर नगर के बाहर कई एकड़ कृषि–योग्य भूमि पर स्थित था। स्थान शान्त था। दिन में प्रभुपाद आराम करते थे, क्योंकि खिड़की से धूप आती थी और उनके शरीर को गरम रखती थी।

• • •

शाम को कीर्तन करने और प्रभुपाद का व्याख्यान सुनने के लिए लोग आते थे। *श्रीमद्‌भागवत* के छठे स्कन्ध पर बोलते हुए प्रभुपाद ने बारहवीं शती में श्रीधर स्वामी कृत व्याख्या का बार–बार उल्लेख किया।

श्रीधर स्वामी का कथन था कि—किसी विधि–विधान के बिना ही—केवल जप करने से मनुष्य को मुक्ति मिल जाती है। यह कैसे? श्रीधर स्वामी उत्तर देते हैं, विधि–विधान भी विद्यमान हैं। कहने का मतलब यह है कि पवित्र नाम का जप इतना शक्तिशाली है कि यह जपकर्ता का तुरन्त उद्धार कर देता है। किन्तु चूँकि हम स्वभाव से ही पतनशील हैं, इसलिए विधि–विधान की व्यवस्था बनी हुई है...।

"प्रात:, मध्याह्न और सायं, तीनों कालों में हमें हरे कृष्ण मंत्र का जप निष्ठा और भक्ति से करना चाहिए। ऐसा करने से हम जीवन की बहुत–सी दुखदायी स्थितियों से बच सकते हैं—केवल जप करने से। अत: हमें बहुत सावधान और श्रद्धालु होना चाहिए। आपको जानना चाहिए कि आप ज्योंही जप करने लगते हैं, कृष्ण आपकी जिह्वा पर नाचने लगते हैं। अत: हमें अत्यन्त सावधान और सम्मानपूर्वक रहना चाहिए।"

हर दिन रात में प्रभुपाद अपने व्याख्यान के लिए श्रीधर स्वामी की व्याख्या को आधार बनाते थे।

"अतएव श्रीधर स्वामी यह उदाहरण देते हैं कि बिना यह जाने कि एक अच्छी औषधि उपलब्ध है, मनुष्य हजारों औषधियाँ लेता रहता है। उसी तरह धार्मिक सिद्धान्तों

के दिग्गज इस हरे कृष्ण मंत्र को न जानकर लोग बहुत से कष्टप्रद कर्मकांडों में फँसते हैं। वास्तव में उनकी कोई जरूरत नहीं होती। असली बात यह है—और श्रीधर स्वामी इसे बहुत जोर देकर कहते हैं—कि आप बिना किसी कर्मकांडी विधि को जाने ही केवल हरे कृष्ण मंत्र का जप कर सकते हैं।

श्रीधर स्वामी की व्याख्या कृष्ण के पवित्र नामों के जपने से होने वाले सर्वश्रेष्ठ लाभों के बारे में विभिन्न धर्मशास्त्रों के उद्धरणों से भरी हुई हैं।

"तब श्रीधर स्वामी कहते हैं—*अखिल चेष्टितम्।* इसका तात्पर्य यह है कि कृष्ण की महिमा को बढ़ाने वाला कोई भी प्रयत्न कृष्ण का पवित्र नाम जपने के समान ही उत्तम है। जब आप प्रचार के लिए, इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए बाहर जाते हैं, तो लोग कदाचित् यह समझ सकते हैं कि आप जप नहीं कर रहे हैं। किन्तु मान लीजिए कि आप किसी को आजीवन सदस्य बनाने के लिए प्रचार कर रहे हैं, तो वह कार्य भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना हरे कृष्ण मंत्र का जप, क्योंकि वह *अखिल चेष्टितम्* है। मनुष्य का जीवन केवल कृष्ण की सेवा में समर्पित होना चाहिए।"

भारतीय श्रोताओं के सामने बोलते हुए प्रभुपाद पश्चिम में अपने प्रचार के बारे में भी बताते थे। एक दिन संध्या को उन्होंने व्यक्तिगत इतिहास बताया कि किस तरह उनके गुरु महाराज से पहली भेंट होने पर गुरु महाराज ने प्रभुपाद से तत्काल कहा कि वे अंग्रेजी भाषा-भाषी संसार में भगवान् चैतन्य के सन्देश का प्रचार करें।

"उस समय मैंने तर्क दिया था कि हम एक पराधीन राष्ट्र हैं और हमारे सन्देश को कौन सुनेगा? तो उन्होंने मेरे तर्क को काट दिया। हाँ, वे बहुत विद्वान थे। मैं उनके सामने क्या था? केवल एक छोटा बच्चा। इसलिए मैंने अपनी हार मान ली।" प्रभुपाद मंद हँसी हँसे।

प्रभुपाद ने इलाहाबाद में अपने व्यवसाय के दिनों के बारे में भी बताया और यह कि वे अपने गुरु महाराज से फिर कैसे मिले और दीक्षित हुए। उन्होंने १९४४ में *बैक टु गॉडहेड* आरम्भ करने के बारे में बताया, और संन्यास लेने के बारे में, और अन्त में १९६५ ई. में अपनी अमेरिका यात्रा के बारे में भी। उन्होंने न्यूयार्क नगर में अपने संघर्षों का उल्लेख किया और बताया कि पहले पहल किस तरह कुछ लड़के उनके साथ हुए, जब उन्होंने सेकंड एवन्यू के स्टोरफ्रंट में अपने आन्दोलन का शुभारम्भ किया।

"तो, व्यावहारिक रूप से हमने कार्य १९६८ में आरम्भ किया। १९६६ में मैंने आरम्भ किया था, लेकिन १९६७ में मैं बहुत बीमार पड़ गया, इसलिए मैं भारत वापस आ गया। और १९६८ में मैं फिर वहाँ गया। यह प्रचार-कार्य जोर से व्यावहारिक रूप से १९६८ से आरम्भ हुआ। १९६८ से १९६९, १९७० और अब यह १९७१ है। इस तरह ये सारी

शाखाएँ इन तीन-चार वर्षों में विकसित हुई हैं और अब व्यावहारिक रूप से सारे योरप के महाद्वीपों और अमेरिका में सब जान गये हैं कि हरे कृष्ण-आन्दोलन क्या है, और ऐसा हमारे प्रचार के कारण हुआ है।

• • •

हर दिन सवेरे सूर्योदय से पहले प्रभुपाद मन्दिर-कक्ष में अपने शिष्यों के सामने बैठ जाते और *श्रीमद्भागवत* से व्याख्यान देते। और हर दिन सवेरे हर एक को अंधकार में छोड़कर बत्ती चली जाती। बिजली चले जाने का यह एक विशेष हिन्दुस्तानी तरीका था और प्रभुपाद व्याख्यान बन्द कर देते, और तब एक भक्त चार मोमबत्तियाँ जलाकर, दो व्यास आसन के पास और दो वेदिका पर रख देता। मोमबत्तियों की लम्बी परछाइयाँ राधा-कृष्ण अर्चाविग्रहों के प्रदीप्त सोने से मिल जाती और चश्मा लगाए तथा हाथ में खुला *श्रीमद्भागवत* लिए प्रभुपाद आश्चर्यजनक ढंग से रहस्यमय लगने लगते।

एक दिन सवेरे श्रील प्रभुपाद ने एक नया गीत गाया—जय राधा माधव।

"मैं आप लोगों को यह गीत सिखाऊँगा," उन्होंने कहा। प्रथम पंक्ति सुनाकर उन्होंने भक्तों से उसे बार-बार दुहरवाया। एक-एक पंक्ति करके उन्होंने गीत को पूरा किया।

जय राधा-माधव कुंज-बिहारी
गोपीजन वल्लभ-गिरिवर धारी
यशोदा-नंदन ब्रजजनरंजन
यमुना-तीर-वन-चारी

उन्होंने कहा कि यह गीत सब को कल सवेरे तक याद हो जाना चाहिए।

केवल थोड़े से भक्त ही गीत कंठस्थ कर सके, इसलिए अगले दिन सवेरे प्रभुपाद ने एक-एक पंक्ति करके उसे फिर गाया। संध्या के व्याख्यान के समय, उन्होंने गीत के अर्थ की व्याख्या की।

"जय राधा माधव कुंज-बिहारी" कृष्ण वृन्दावन में आनन्द मना रहे हैं। भगवान् का यही सही चित्र है—केवल आनन्द मनाता हुआ। कृष्ण की वृन्दावन-लीला श्री भगवान् का वास्तविक प्रतिरूप है—वे केवल आनन्द मनाते हैं।

"सभी वृन्दावन वासी—गोपियाँ, गोप, महाराज नन्द, यशोदा—सभी केवल इसलिए चिन्ताकुल हैं कि कृष्ण को प्रसन्न कैसे रखे जायें। उनके पास अन्य कोई कार्य नहीं है। वृन्दावन के निवासियों के पास अन्य कोई कार्य नहीं है, सिवाय कृष्ण को प्रसन्न करने के,

और कृष्ण के पास अन्य कोई कार्य नहीं है। *यशोदानन्दन ब्रज-जन-रंजन, यमुना-तीर-वन चारी।* वे यमुना के तट पर वृन्दावन में घूम रहे हैं। यह भगवान् का वास्तविक चित्र है। किन्तु ब्रह्मा, इन्द्र बड़े-बड़े देवता भी भ्रांत हो गये हैं। वे कभी-कभी शंका करने लगते हैं कि यह ग्वाला-लड़का भगवान् कैसे हो सकता है, ठीक इस तरह जैसे हम में से कुछ लोग भी ऐसा सोचने लगते हैं। किन्तु जो इस प्रकार सोचते होते हैं, उनके लिए भी कृष्ण की सर्वश्रेष्ठता का प्रदर्शन है। *गोपीजन-बल्लभ-गिरिवर धारी।* वे व्रजवासियों को प्रसन्न करने में व्यस्त हैं, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर वे सात वर्ष की अवस्था में गोवर्धन पर्वत उठा सकते हैं। या वे तीन महीने की अवस्था में पूतना को मार सकते हैं।

"कितने ही असुर प्रतिदिन उनके पास आया करते थे! कृष्ण अपने सखाओं के साथ गाएं और बछड़े लेकर वन में जाते थे, और हर दिन उन्हें मारने के लिए कंस एक असुर भेजता था। अघासुर, बकासुर, धेनुकासुर—इस तरह कितने ही असुर आये!

"तो, कृष्ण एक गोप-पुत्र की तरह भी लीला करते हैं। लेकिन श्री भगवान् के रूप में उनका सर्वोच्च अनुग्रह उनसे कभी अलग नहीं रहता। वे भगवान् हैं। भगवान् की सृष्टि किसी के ध्यान से नहीं होती। भगवान् भगवान् हैं। भगवान् की रचना नहीं होती। हमें यह जानना चाहिए।"

'जय राधा माधव' को आरम्भ करने के तीसरे दिन सवेरे प्रभुपाद ने उसे फिर गाया और भक्तों ने उनके पीछे दुहराया। तब वे उसकी आगे व्याख्या करने लगे। उन्होंने कहा कि राधा-माधव की शाश्वत प्रेम-लीला वृन्दावन की अमराइयों में चलती रहती है।

उनका बोलना रुक गया। उनके बन्द नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये और वे धीरे-धीरे सिर हिलाने लगे। उनका शरीर काँपने लगा। कई मिनट बीत गये, और कमरे में हर एक व्यक्ति बिल्कुल शान्त था। अन्त में उनमें बाहरी चेतना आई और उन्होंने कहा, "अब, हरे कृष्ण का कीर्तन करो।"

उसके बाद गोरखपुर के राधा-कृष्ण अर्चाविग्रहों का नाम श्री श्री राधामाधव हो गया।

• • •

कौशल्या नित्य मन्दिर का फर्श धोती थी, जबकि प्रभुपाद *श्रीमद्भागवत* पर व्याख्यान करते थे। एक दिन सवेरे प्रभुपाद व्याख्यान के बीच में रुक गये। "जरा देखो इस लड़की को," कौशल्या कमरे के दूसरे सिरे पर फर्श पोंछ रही थी, "यह प्रथम श्रेणी की सेवा है।"

अगले दिन प्रभुपाद ने कौशल्या को अपने निकट बुलाया, "हर दिन सवेरे तुम फर्श को इतनी अच्छी तरह धोती हो," उन्होंने कहा, "लेकिन आज तुम फर्श इस तरह धो रही हो, जैसे कोई कौवा स्नान करता है।" प्रभुपाद ने अपना हाथ हिलाया, मानो चारों ओर

जल छिड़क रहे हों। "तुम नहीं जानती कि फर्श कैसे धोया जाता है, मैं तुम्हें दिखाऊँगा।" प्रभुपाद व्यास-आसन से नीचे उतर आये और कमरे के दूसरे सिरे की ओर चले। सभी शिष्य उनके पीछे चले।

"तुम्हारी बाल्टी कहाँ है?" कौशल्या अपनी बाल्टी ले आई। प्रभुपाद ने एक चिथड़ा माँगा। उसने अपना चिथड़ा दे दिया। तब प्रभुपाद नीचे झुके और फर्श साफ करने लगे। "फर्श ऐसे साफ करते हैं," उन्होंने कहा, "काफी पानी डालकर। और एक बार में थोड़ा हिस्सा लेते हैं।" इसे दो बार करते हैं, पहली बार भीगे चिथड़े से, और दूसरी बार निचुड़े हुए चिथड़े से।

भक्त आश्चर्य में खोए हुए देखते रहे। प्रभुपाद ने विधि को कई बार दुहराया। वे फर्श के कुछ भाग को पोंछते और फिर उसे सुखाते। इस बात की वे सावधानी रखते कि साफ किये हुए हिस्से पर पैर न पड़े। "देखा?" उन्होंने कहा, "यह विशेषता है।"

जब तमाल कृष्ण ने प्रभुपाद से बम्बई जाने और अधिक बड़े पैमाने पर धर्मोपदेश करने की प्रार्थना की तो उन्होंने उत्तर दिया, "देखना है कि कृष्ण की इच्छा हमें उस स्थान में ले जाने की है या नहीं।" हंसदूत भी धर्मोपदेश करने के लिए बेचैन होने लगा और प्रभुपाद ने ब्रह्मचारियों के एक दल के साथ उसे अलीगढ़ और आगरा भेज दिया।

गोरखपुर में कुछ होता मालूम नहीं हो रहा था, किन्तु प्रभुपाद की अपनी योजनाएँ थीं। वे एक मन्दिर का निर्माण करने के लिए विश्वविद्यालय के अधिकारियों से अब भी वार्तालाप कर रहे थे।

> यदि हम अपने प्रयत्न में सफल हो जाते हैं, तो सारे संसार में यह अनुपम होगा और शीघ्र ही अधिकाधिक कालेजों में यह होने लगेगा।... और यदि हम कृष्णभावनामृत के लिए एक सीट निर्धारित कर लेते हैं, तो छात्र कृष्णभावनामृत में शोध उपाधि प्राप्त कर सकते हैं और सारे संसार में धर्मोपदेश के लिए जा सकते हैं।

प्रभुपाद के तीन उद्देश्य थे : गोरखपुर विश्वविद्यालय के छात्रों तक पहुँचना, फैक्टरियों में कीर्तन का प्रवेश कराना, और घरों में कीर्तन का आरम्भ कराना। सबसे बड़ी बाधा स्थानीय जनता में प्रतिबद्धता का अभाव था। उनके संध्याकालीन व्याख्यान में सम्मिलित होने की इच्छा बहुतों में थी, लेकिन कृष्ण की सेवा में सचमुच समय, धन और शक्ति का समर्पण करना अधिक कठिन था। कम-से-कम राधा-कृष्ण मन्दिर चहल-पहल से भरा रहता था और प्रभुपाद को आशा थी कि गीता प्रेस के निदेशक कृष्ण निकेतन भवन को

स्थायी रूप में इस्कान को दे देंगे।

प्रभुपाद सुबह-शाम व्याख्यान देते रहे। लगातार तीन शाम वे *चैतन्य-चरितामृत* के केवल एक श्लोक पर बोलते रहे। उन्होंने मायावाद के इस तर्क को ध्वस्त कर दिया कि परम सत्य अन्ततः निराकार ब्रह्म है।

"मायावादी दार्शनिक कहते हैं कि परम सत्य निराकार है और उससे भिन्न कोई शक्ति नहीं है। अतएव चैतन्य महाप्रभु की चुनौती है कि परम सत्य बहुशक्तिमान है। मान लीजिए किसी के पास कोई बड़ा व्यवसाय है, बड़ा कारखाना है। और यदि मालिक कहता है, "मैं इस कारखाने का सर्वेसर्वा हूँ," तो यह सही है। उदाहरण के लिए बिड़ला को लीजिए। लोग कहते हैं, 'बिड़ला का कारखाना'। बिड़ला का नाम कारखाने से जुड़ा है। यद्यपि बिड़ला एक व्यक्ति है और वह व्यक्तिगत रूप से कारखाने में उपस्थित नहीं हैं। फिर भी लोग कहते हैं, 'बिड़ला की फैक्टरी।' इसका तात्पर्य है, बिड़ला की पूँजी, बिड़ला की शक्ति वहाँ है। यदि उस फैक्टरी में कोई हानि होती है, तो वह बिड़ला की होती है। या यदि फैक्टरी में कोई लाभ होता है, तो वह बिड़ला का होता है। इसलिए फैक्टरी में बिड़ला की शक्ति लगी है। इसी तरह, पूरा विश्व कृष्ण का प्रदर्शन है। यहाँ की प्रत्येक वस्तु कृष्ण उनकी शक्ति है। उनकी शक्ति द्वारा उनका प्रतिनिधित्व होता है। इसी को कहते हैं एक साथ भिन्न और अभिन्न, *अचिन्त्य भेदाभेद-तत्त्व।*"

अमेरिका में धर्मोपदेश का विवेचन करते हुए प्रभुपाद ने कहा कि पाश्चात्य जगत निन्नानवे प्रतिशत अज्ञान और वासना में डूबा था। यद्यपि अमेरिका पृथ्वी पर सबसे धनी राष्ट्र है, इसके युवक हिप्पी बनते जा रहे थे, जिससे उनके माँ-बापों और सरकार के नेताओं को बड़ी निराशा थी। अतः अपनी संपन्नता के बावजूद भी वे दुखी थे, लेकिन वे आध्यात्मिक ज्ञान को समझने के लिए परिपक्व हो रहे थे।

"यह भगवान् चैतन्य की अहैतुकी कृपा है। अब आप देख सकते हैं कि जब ये लड़के कीर्तन करते होते हैं, तो वे किस तरह भावविह्वल हो जाते हैं। वे तुरन्त आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच जाते हैं। केवल यही नहीं, वे सर्वत्र कीर्तन कर रहे हैं—हर मन्दिर में। इन लड़कों और लड़कियों के साथ लाभ की बात यह है कि इनके दिमाग में कोई गड़बड़ नहीं है। वे सीधे कृष्ण को श्री भगवान् स्वीकार करते हैं, वे सीधे भगवान् चैतन्य के आदेश को स्वीकार करते हैं। इसलिए वे आगे बढ़ रहे हैं। उनका सौभाग्य यह है कि उनके दिमाग में विचारों की कोई गड़बड़ नहीं है। उन्होंने अन्य सभी धंधे छोड़ दिए हैं और कृष्ण को श्री भगवान् स्वीकार कर लिया है। इसलिए भारत में हम भी वही कर सकते हैं। इसमें कठिनाई क्या है? हमें यह जरूर करना चाहिए। केवल इतना कहिए : *कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।* (अर्थात् कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं) और उनके प्रति समर्पित हो जाइए।"

• • •

प्रभुपाद ने श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती का आविर्भाव दिवस गोरखपुर में मनाया। सवेरे की सभा में उन्होंने कहा, "हमें इस दिवस का सम्मान करना चाहिए और विनीत भाव से भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी से प्रार्थना करनी चाहिए कि 'हम लोग आपकी सेवा में लगे हैं, इसलिए हमें शक्ति दीजिए। हमें बुद्धि दीजिए। हम आपके सेवक द्वारा निर्देशित हैं।' तो, इस तरीके से हमें प्रार्थना करनी है। और मैं समझता हूँ कि शाम को हम प्रसाद-वितरण करेंगे। बहुत से अतिथि आयेंगे, इसलिए उन्हें प्रसाद दिया जा सकता है।"

प्रभुपाद ने कहा कि आजीवन सदस्यों और अन्य मित्रों को दोपहर में पुष्प-समर्पण समारोह में आमंत्रित करना चाहिए। एक भक्त ने भोजन के विषय में पूछा।

प्रभुपाद : "भोजन का तात्पर्य है पूड़ी और हलवा और एक सब्जी और चटनी। बस—चार चीजें। सादा रखो।"

तमाल कृष्ण : "प्रभुपाद ? आप चाहते हैं कि हम आपके गुरु महाराज को दोपहर का भोजन दें ? विशेष व्यंजनों का भोजन ?"

प्रभुपाद : "विशेष व्यंजनों का भोजन नहीं। नियम यह है कि हम अर्चाविग्रह को जो भी चढ़ाते हैं, वह गुरु को चढ़ाया जाता है। और गुरु अपने गुरु को चढ़ाते हैं। इस तरह यह कृष्ण को पहुँचता है। हम सीधे राधा-कृष्ण को नहीं चढ़ाते हैं। नहीं। हमें इसका अधिकार नहीं है। न ही कृष्ण इस तरह के चढ़ावे को स्वीकार करते हैं। आचार्यों के चित्र—वहाँ वे क्यों रखे जाते है ? वास्तव में आप प्रसाद अपने गुरु को अर्पण करते हैं। वे अपने गुरु को अर्पण करते हैं, और उनके गुरु अपने गुरु को। इस तरह यह कृष्ण को पहुँचेगा। यही प्रक्रिया है। तुम सीधे कृष्ण के पास या भूतपूर्व आचार्यों के पास नहीं जा सकते। यह सम्भव नहीं है।"

• • •

एक दिन प्रभुपाद हनुमान प्रसाद पोद्दार से मिलने गये। श्रीमान् पोद्दार कुछ समय से बहुत बीमार थे, लकिन वे बैठ सके और उन्होंने संक्षेप में प्रभुपाद से बातचीत की। 'कल्याण' के सम्पादक के रूप में, जो महाभारत और अन्य वैदिक धर्मशास्त्रों से किस्तें छापता था, हनुमान प्रसाद भारतीय धार्मिक विचारधारा के विश्वविख्यात पोषक थे। *भगवद्गीता* का उनका सस्ता हिन्दी अनुवाद लाखों की संख्या में प्रकाशित हुआ था, जिससे कोई निर्धन व्यक्ति भी *भगवद्गीता* की एक प्रति खरीद सकता था। श्रीमान् पोद्दार सन् १९६२ से प्रभुपाद के मित्र थे, जब प्रभुपाद गोरखपुर में उनके पास आये थे और जब

उन्होंने उन्हें *श्रीमद्भागवत* के अपने पहले खंड की हस्तलिपि दिखाई थी। ग्रन्थ के महत्त्व को स्वीकार करते हुए श्रीमान् पोद्दार ने अपनी संस्तुति से प्रभुपाद की सहायता की थी, ताकि वे दिल्ली के उद्योगपति, श्रीमान् डालमिया से उसके प्रकाशन के लिए अनुदान प्राप्त कर सकें। अब लगभग दस वर्ष बाद प्रभुपाद श्रीमान् पोद्दार को हाल में प्रकाशित अपनी पुस्तकें *'कृष्ण, दि सुप्रीम पर्सनालिटी आफ गॉडहेड,'' 'टीचिंग्ज आफ लार्ड चैतन्य,'' दि नेक्टर आफ डिवोशन'* और अपनी पत्रिका *बैक टु गॉडहेड* दिखा रहे थे। श्रीमान् पोद्दार प्रभावित हुए। और उन्होंने तथा प्रभुपाद ने एक-दूसरे के कार्य की सच्चे दिल से सराहना की।

श्रीमान् सूर्यकान्त फोगला : *हनुमान प्रसाद पोद्दार मेरे दादा थे। वे उस समय बहुत बीमार थे, जब प्रभुपाद उनसे उनके सोने के ऊपर वाले कमरे में मिलने आये थे। बहुत-सी ऐसी चीजें होती हैं, जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती, किन्तु वे आँखों की भाषा से बात कर रहे थे। मेरे दादा ने अपनी आखों से कुछ आभार, कुछ प्रेम, कुछ आदर प्रकट किया और प्रभुपाद का उत्तर भी उसी तरह से था। दोनों ओर से एक-दूसरे के प्रति जो प्रशंसा का भाव था, उसे वहाँ उपस्थित सभी लोग आसानी से देख और सराह सकते थे। प्रभुपाद के बहुत-से शिष्य वहाँ उपस्थित थे और दोनों संतों और महान् पुरुषों को मिलते और उन्हें बात करते देखकर, हर एक के नेत्रों में आँसू भर गये थे।*

वे आध्यात्मिक लोक के विषय में बातें कर रहे थे और वे एक दूसरे के कार्यों की प्रशंसा कर रहे थे। मेरे दादा कह रहे थे कि प्रभुपाद ने जो कुछ किया है, वह संसार में किसी के लिए भी अविस्मरणीय है; क्योंकि हमारी भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य देशों में ले जाने का—सम्पूर्ण श्रेय हमारे प्रिय प्रभुपाद को है। केवल वे ही थे, जो राधा-कृष्ण और उनके पवित्र नाम को बाहर ले गये—ऐसे ढंग से जैसे न कोई अभी तक ले जा सका, न कोई भविष्य में ले जा सकेगा।

चूँकि श्रीमान् पोद्दार बीमार और कमजोर थे, इसलिए प्रभुपाद आधे घंटे के बाद चले गये। प्रभुपाद गोरखपुर में दो सप्ताह बिता चुके थे और अब वे बम्बई जाने को उत्सुक थे। अर्चाविग्रहों की पूजा और धर्मोपदेश के कार्य के लिए दो शिष्यों को गोरखपुर में पीछे छोड़कर, प्रभुपाद ने वहाँ से प्रस्थान किया।

• • •

बम्बई में इस्कान का मुख्यालय आकाश-गंगा भवन की सातवी मंजिल पर था। किराया लगभग तीन हजार रुपया प्रति-मास था और भक्तों के पास मासिक आय का कोई निश्चित स्रोत नहीं था। तब भी, चूँकि भवन एक महत्त्वपूर्ण और सम्मानित जगह पर था,

इसलिए प्रभुपाद ने यह भार उठाया था। बम्बई में वे जिस तरह का धर्मोपदेश करना चाहते थे, उसके आधार के लिए ऐसा मुख्यालय जरूरी था; और उनका अगला धर्मोपदेश एक विशाल ग्यारह दिवसीय पंडाल कार्यक्रम होने जा रहा था। "यदि तुम आखेट के लिए जा रहे हो," प्रभुपाद ने कहा, "तो तुम्हें गैंडे का आखेट करना चाहिए। इसमें यदि तुम्हें सफलता नहीं भी हुई तो लोग कहेंगे, "ओह, आखेट नहीं हो सका।" किन्तु यदि तुम सफल हो गये, तो हर एक को आश्चर्य होगा, और वह विस्मित हो जायेगा।"

प्रभुपाद ने जब अपनी विशाल पंडाल-उत्सव योजना के बारे में बताया, तो भक्तों को इसकी तीव्र अनुभूति हुई कि उनका सारा धर्मोपदेश प्रभुपाद की प्रेरणा से संचालित था; बिना उनके वे बम्बई में इतने विशाल पैमाने पर ऐसे उच्चाकांक्षी पंडाल-उत्सव का प्रयत्न कभी कर ही नहीं सकते थे। प्राय: "अमरीकी और योरपीय शिष्यों" को प्रभुपाद के साथ घोषित किया जाता था, मानो वे उनके समान महत्त्व रखते हों, किन्तु भक्त अपने आपको प्रभुपाद का केवल मन्दबुद्धि सेवक मानते थे, जो भगवान् के सच्चे सेवक की सहायता करने का प्रयत्न कर रहे थे। यद्यपि प्रभुपाद अपने शिष्यों की प्रशंसा करते थे, पर उनके शिष्य जानते थे कि प्रभुपाद ही कृष्ण के अधिकृत प्रतिनिधि थे। वे उनको कृष्ण से जोड़ने के लिए, उनके अधिकारी और व्यक्तिगत कड़ी थे; उनके शब्दों और कार्यों से पूर्ण दिव्य शक्ति प्रकट होती थी। चूँकि कृष्ण असीम थे, इसलिए कृष्ण के सर्व-प्रिय मित्र, श्रील प्रभुपाद, को अधिकार था कि वे कृष्ण के लिए भक्तों से असीम सेवा की माँग करें। कृष्ण की सेवा के नाम पर कोई योजना असम्भव नहीं थी। असम्भव, प्रभुपाद ने कहा, ऐसा शब्द है, जो मूर्खों के कोश में पाया जाता है।

किन्तु जब प्रभुपाद ने पंडाल उत्सव के लिए अपनी योजनाओं के बारे में बताया, तो भक्तों ने सन्देह प्रकट किया : वे धन का संग्रह कैसे करेंगे? वे इतना बड़ा तम्बू कैसे खड़ा करेंगे? वे इतना खाद्यान्न कहाँ से लाएंगे? और उन्हें पकाएगा कौन? प्रभुपाद को उनके सन्देहों पर हँसी आई। "तुम सभी अमेरिकन हो," उन्होंने कहा, "तो अमेरिकन होने का लाभ क्या है, यदि तुम कुछ आश्चर्यजनक कार्य नहीं कर सकते?"

प्रभुपाद ने कहा कि बम्बई का पंडाल अमेरिका के कार्य-कौशल को भारत की आध्यात्मिकता से जोड़ने का सर्वोत्तम ढंग होगा। उन्होंने एक अंधे और एक लंगड़े का उदाहरण दिया। यद्यपि अलग-अलग वे असहाय थे, लेकिन परस्पर सहयोग द्वारा—जिसमें अंधा आदमी लंगड़े को अपने कंधों पर ले जा रहा था और लंगड़ा आदमी अंधे को रास्ता बता रहा था—वे सफलतापूर्वक आगे बढ़ सके। ईश्वर के बारे में अवज्ञा और भौतिकता के कारण अमेरिका अंधे व्यक्ति की भाँति था और भारत विदेशी आक्रमणों, गरीबी और वैदिक ज्ञान की भ्रामक व्याख्याओं के कारण लंगड़े आदमी की तरह था। अमेरिका के पास

तकनीकी उन्नति और धन था और भारत के पास आध्यात्मिक ज्ञान था। कृष्णभावनामृत आन्दोलन का कार्य दोनों शक्तियों को आपस में मिलाकर संसार की उन्नति करना था। और उसका एक व्यावहारिक प्रयोग बम्बई का पंडाल उत्सव था।

प्रभुपाद ने कार्य बाँट दिया, श्यामसुन्दर को उन्होंने प्रचार-कार्य दिया, तमाल कृष्ण को पंडाल की व्यवस्था का, गिरिराज को धन-संग्रह का और मधुद्विषा को मंच पर निर्धारित कार्यक्रम का। प्रभुपाद की 'गैंडे के आखेट' की भावना से अनुप्राणित होकर श्यामसुन्दर ने विशाल स्तर पर प्रचार-कार्य आरम्भ किया, सड़कों के आर-पार उसने बड़े-बड़े पोस्टर और पताकाएँ टाँग दीं, जिन पर घोषणा थी "कृष्णकृपामूर्ति श्री ए.सी. भक्तिवेदान्त प्रभुपाद अंग्रेजी में ईश्वरीय विज्ञान पर भाषण करेंगे। उनके अमरीकी और योरोपीय भक्त प्रसाद बाँटेंगे और भजन-कीर्तन का नेतृत्व करेंगें—हरे कृष्ण उत्सव क्रास मैदान में—मार्च २५ से अप्रैल ४ तक।

गिरिराज : *श्रील प्रभुपाद ने बम्बई को स्तंभित करा दिया। पूरा नगर हरे कृष्ण उत्सव को लेकर हलचल और उत्सुकता से भर गया। हमने बम्बई के सभी बड़े चौराहों पर पताकाएँ लगा दी थीं। सभी दीवारों पर पोस्टर लगा दिए गये और हर दीवार पर कई-कई पोस्टर लगे थे। समाचार-पत्रों में हमने बहुत बड़े विज्ञापन छपा दिए, जिसमें पृथ्वी के गोले के ऊपर श्रील प्रभुपाद का सुन्दर चित्र और ये शब्द अंकित थे—भागवत् धर्म पर भाषण : हरे कृष्ण उत्सव। भक्ति संप्रदाय के विश्वविख्यात प्रचारक, कृष्णकृपामूर्ति श्री ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी।*

दिन-प्रतिदिन जोर अधिक बढ़ता गया, और हर दिन कोई नई चीज होने लगी। अन्त में, आखिर के दो दिनों में हमने विक्टोरिया टर्मिनस रेल्वे स्टेशन पर, जो बम्बई का सबसे बड़ा कारोबारी चौक था, एक विशाल सूचना-पट लगाया। उस समय तक हर एक बहुत कुछ जान गया था कि यह उत्सव क्या था, और कहाँ होने जा रहा था और इस सूचना-पट पर जो कुछ कहा गया था, वह था विशाल अक्षरों में हरे कृष्ण। उस समय तक हर एक अवगत हो चुका था, अतएव केवल ये दो विशाल शब्द "हरे कृष्ण" पर्याप्त थे।

तब श्यामसुन्दर ने हीलियम गैस से भरे एक बड़े गुब्बारे की व्यवस्था की, जिसे क्रास मैदान में एक बड़ी रस्सी से बाँध दिया गया। गुब्बारा नगर के ऊपर मंडराता रहा, और उस पर एक फहराती पताका लगा दी गई जिस पर 'हरे कृष्ण उत्सव' अंकित था। यह वास्तविक अमरीकी पटुता, सूक्ष्मदर्शिता और सक्रियता थी।

श्यामसुन्दर के नेतृत्व से प्रेरित होकर और प्रतियोगिता की भावना से भरकर, अन्य भक्त बड़े उत्साह से अपनी योजनाओं को पूरा करने में लग गये। जब प्रभुपाद ने इस्कान के स्थानीय आजीवन सदस्यों और समर्थकों की एक बैठक बुलाई, तो उनकी उपस्थिति

निराशाजनक रही—केवल लगभग एक दर्जन लोग आये। और वे भी प्रभुपाद की योजना की विशालता के बारे में सुनकर, हिचकिचाने लगे। उत्सव में दस लाख रूपए से अधिक लगेंगे। यद्यपि कुछ आजीवन सदस्यों को सन्देह था कि भक्तों द्वारा ऐसे विशाल पैमाने पर उत्सव का आयोजन सम्भव हो सकेगा, फिर भी सदाजीवतलाल, चंदुलाल बहल, कार्तिकेय महदेविया, कैलाश सेक्सेरिया, रामचन्द्र छाबरिया, जी.डी. सोमानी तथा इस तरह के कुछ अन्य दिलेर लोगों ने वचन दिया कि वे धन-संग्रह में भरसक सहायता करेंगे।

प्रभुपाद सक्रिय बने रहे और उन्होंने अपने शिष्यों को आगाह कर दिया कि वे अपने लेन-देन में धोखेबाजों से सावधान रहें। हर रात को भक्त उन्हें रिपोर्ट देते और प्रभुपाद उनसे बहुत सारे विवरण पूछते। वे सर्वोत्तम स्थान, सर्वोत्तम कार्य और सर्वोत्तम मूल्य चाहते थे। वे हर चीज जानना चाहते थे : भोजन बनाने का स्थान कहाँ होगा? क्या सभी भक्त अपनी शक्ति-भर कार्य कर रहे हैं? क्या डाक के पते पूरे कर लिए गये हैं? क्या निमंत्रण-पत्र भेज दिए गये हैं? शौचालय की क्या व्यवस्था है? लाउड-स्पीकर पर क्या खर्च आयेगा? वे हर विवरण को बहुत तेज और विश्लेषणात्मक बुद्धि से देखते थे।

गिरिराज के धन-संग्रह का कार्य ठीक चल रहा था। उसने व्यवसायियों से अनुदान प्राप्त किये थे और एक स्मारिका मुद्रित करा ली थी। किन्तु वह एक प्रकार का तनाव अनुभव कर रहा था, और वह प्रभुपाद के पास सान्त्वना के लिए आया। "क्या कृष्णभावनामृत में हम बल का उपयोग कर सकते हैं?" उसने पूछा।

प्रभुपाद की भौंहें तन गई, "नहीं, हम बल का उपयोग नहीं कर सकते।" "लेकिन हमें तब क्या करना चाहिए, जब हम यह देखें कि एक कार्यकर्ता कार्य में सुस्ती कर रहा है और उसे जो करना चाहिए उसे वह नहीं कर रहा है?"

"नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "हम बल का उपयोग कभी नहीं कर सकते।"

"अच्छा, आजीवन सदस्य बनाने में क्या करना चाहिए।"

"बल का उपयोग हम नहीं कर सकते," प्रभुपाद ने अपना उत्तर दुहराया। "किन्तु उनके साथ चाल चल सकते हैं।" उन्होंने एक लड़के की कहानी बताई जो गणित का अध्ययन नहीं करना चाहता था। अध्यापक ज्योंही श्यामपट पर एक प्लस एक लिखता, त्योंही लड़का जी चुराने लगता। इसलिए अध्यापक ने श्यामपट पर एक गाय का चित्र खींचा और लड़के से पूछा, "यदि एक आदमी के पास एक गाय है और तब वह दूसरी गाय खरीदता है, तो उसके पास कितनी गाएं हो जायेंगी?" लड़के ने उत्तर दिया, "दो।" इस प्रकार अध्यापक लड़के को गणित पढ़ाने लगा, यद्यपि उसकी इच्छा पढ़ने की नहीं थी।

"इस तरह लोग कृष्ण-सेवा से विमुख हो सकते हैं," प्रभुपाद ने समझाया, "लेकिन

हम उनके साथ चाल खेल सकते हैं और उनके जाने बिना ही उनसे सेवा करवा सकते हैं। लेकिन हम बल का उपयोग कभी नहीं कर सकते। ये सभी लोग व्यवसायी हैं। वे हमेशा लाभ-हानि का हिसाब करने में लगे होते हैं। लेकिन वे पवित्र-हृदय भी होते हैं और कृष्ण को पाना चाहते हैं। इसलिए तुम उन्हें आश्वस्त कर सकते हो कि धन देकर वे कृष्ण के निकट पहुँचेंगे और लाभ कमायेंगे। और सच भी यही है। जब वे आश्वस्त हो जायेंगे, तो वे धन देंगे।"

प्रभुपाद ने जयपुर से सफेद संगमरमर की विशाल मूर्तियों के दो सेटों के लिए आर्डर दिये थे। आर. डी. बिड़ला के अनुदान से उनका मूल्य चुकाया गया था। एक सेट को बम्बई के मन्दिर में स्थापित करना था और दूसरे की पूजा पंडाल में की जानी थी और बाद में उसे पश्चिम के मन्दिरों में से एक में भेजा जाना था। लेकिन भक्त इस बात के लिए चिन्तित थे कि मूर्तियों को समय पर तैयार करवाकर जहाज द्वारा भेज दिया जाए। चिन्ता के अन्य भी कारण थे और वे उत्सव के दिन तक बने रहे। पंडाल का निर्माण, प्रसाद का वितरण, बैठने की व्यवस्था, ध्वनिप्रसारक यंत्र की व्यवस्था—आदि काम समय पर हो पाएँगे या नहीं और इनके लिए पर्याप्त धन मिल पाएगा या नहीं, ऐसी बातें थी जो अन्त तक अनिश्चित बनी रहीं। किन्तु प्रभुपाद के निर्देशन में और कृष्ण में दृढ़ आस्था रखते हुए भक्त अनवरत कार्य में लगे रहे।

और सब कुछ सफल रहा। पहले दिन दस हजार लोग आये और रात को उनकी संख्या बीस हजार हो गई। भक्तों की संख्या, जिसमें पश्चिम के नवागन्तुक शामिल थे, सौ के करीब थी और बड़े मंच पर वे आसानी से बैठ सकते थे और फिर भी नृत्य और कीर्तन के लिए स्थान बचा रहा था। मंच पर स्थित सुनहरे गुम्बदवाली अलंकृत वेदिका पर अनगिनत फूलों की सजावट के बीच राधा-कृष्ण आसीन थे। प्रभुपाद का विशाल, लाल व्यास-आसन, जिसके ऊपर छतरी लगी थी, मंच के बीच में था। प्रभुपाद की पुस्तकें भी मंच पर प्रदर्शित थीं। ऊँचे और विशाल पंडाल में, जिसमें तीस हजार से अधिक लोगों के बैठने की व्यवस्था थी, मर्करी बल्ब लगे थे और मंच रंगबिरंगी चमकने वाली प्रकाश-किरणों से जगमगा रहा था।

कार्यक्रम में कीर्तन था, प्रसाद था, व्याख्यान था और चित्र-पट्टिकाएँ थीं। फिर कीर्तन और फिर प्रसाद था। और बम्बई की जनता को, जो अपने कृत्रिम परिष्कार और पाश्चात्यीकरण के बावजूद मन से भक्त थी, ये चीजें प्रिय थीं—राधा और कृष्ण, कीर्तन और प्रसाद। ये चीजें पाश्चात्यों द्वारा प्रस्तुत की जा रही थीं—इससे पंडाल और भी आकर्षक बन गया था।

रसोइयों ने प्रसाद पंडाल में ही तैयार किया : पत्थर के कोयलों की आंच पर आठ

फुट चौड़े चूल्हों पर रखे पात्रों में वे लम्बे करघुलों बेलनों से खिचड़ी और हलवा हिलाते रहे। हर रात भक्त हजारों प्लेटें परोसते थे।

संध्या-समय पंडाल में प्रभुपाद का आगमन कार्यक्रम का चरम बिन्दु होता था। वे अपने व्यास-आसन पर बैठ जाते थे, नन्हीं सरस्वती आगे बढ़कर उन्हें माला पहनाती थी और श्रोता-मंडली तालियाँ बजाती थीं। प्रभुपाद भीड़ के शान्त होने की प्रतीक्षा करते थे, जो कभी शान्त नहीं होती थी। इसलिए वे बोलना शुरू कर देते थे और उनकी आवाज शक्तिशाली ध्वनिप्रसारक यंत्र में से गूँजने लगती थी। उन्होंने अपने पहले व्याख्यान का नाम रखा, "आधुनिक सभ्यता विफल रही है और एकमात्र आशा कृष्णभावनामृत है।"

प्रभुपाद अर्ध निमीलित-नेत्र के साथ ध्यानस्थ बैठे थे। वे अब तक की अपनी सब से बड़ी श्रोता-मंडली को सम्बोधित कर रहे थे। जब वे कृष्ण की महिमा का बखान और कृष्ण के शत्रुओं की आलोचना करने लगे, तो उनका भाषण विशेष रूप से ओजपूर्ण हो उठा। उन्होंने उन सरकारों की निन्दा की, जो कृष्णभावनाभावित नहीं थीं और उन गुरुओं की निन्दा की, जो कृष्णोपासना की उपेक्षा करते थे। उन्होंने समस्त विश्व को कृष्ण का सन्देश सिखाने पर बल दिया और श्रोता-मंडली में बैठे बम्बई गौड़ीय मठ के उनके गुरु-भाई सम्मानपूर्वक उनकी बात सुनते रहे।

"आप देख रहे हैं कि लगभग संसार-भर में *भगवद्गीता* का सिद्धान्त स्वीकार किया जा रहा है कि कृष्ण परम भगवान् हैं। ये लड़के और लड़कियाँ जो इस समय यहाँ कृष्णभावनामृत से प्रमाणित होकर नाच रहे हैं, चार साल पहले कृष्ण का नाम भी नहीं जानते थे। हाँ, इनमें कुछ *भगवद्गीता* का नाम जरूर जानते थे, क्योंकि *भगवद्गीता* बहुत व्यापक रूप में पढ़ी जाती है, किन्तु चूँकि *भगवद्गीता* को सही ढंग से नहीं प्रस्तुत किया गया था, यद्यपि यह सौ, दो सौ या उससे भी अधिक वर्षों से बहुत व्यापक रूप में पढ़ी जाती थी, इसलिए एक भी कृष्ण-भक्त नहीं था। किन्तु चूँकि अब *भगवद्गीता यथारूप* प्रस्तुत की जा रही है, इसलिए चार वर्षों के अन्दर सैकड़ों-हजारों कृष्ण-भक्त हो गये हैं। तो, हमारे कहने का तात्पर्य यही है कि आप किसी वस्तु को जैसी वह है उसी रूप में, बिना किसी मिलावट के प्रस्तुत करें...।

"तो, यही हमारा मिशन है। यह भारत की संस्कृति है। लोग इस संस्कृति, कृष्ण संस्कृति के लिए तड़प रहे हैं। इसलिए आपको *भगवद्गीता यथारूप* प्रस्तुत करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। तब इस कृष्ण संस्कृति द्वारा भारत विश्व में सर्वत्र विजयी होगा। विश्वास रखिए। लेकिन हम दूसरों से सहायता पाने के लिए भाग रहे हैं। हमारी सरकार के लोग अमेरिका जाते हैं और कहते हैं, 'कृपया हमें गेहूँ दीजिए, कृपया हमें धन दीजिए, कृपया हमें सैनिक दीजिए।' यह केवल भीख माँगने का धंधा है। किन्तु हमारे पास एक

वस्तु है, जो आप उन्हें दे सकते हैं। केवल भीख माँगने से आपके देश की महिमा नहीं बढ़ेगी।"

गिरिराज : *प्रभुपाद बम्बई के लोगों को ओजपूर्ण धर्मोपदेश दे रहे थे और हर शाम को पंडाल कम-से-कम बीस हजार लोगों से भरा होता था। श्रील प्रभुपाद बड़े ओजपूर्ण ढंग से धार्मिक सिद्धान्तो का अनुसरण करने पर बल देते हुए भाषण देते थे। वे जानते थे कि ये लोग हिन्दू थे, पर वे धार्मिक सिद्धान्तों का पालन नहीं करते थे। प्रभुपाद इतना बलपूर्वक बोल रहे थे कि मैं जानता था कि जो कुछ वे कह रहे थे, वह उनके श्रोताओं में से कई लोगों के लिए स्वीकार करना कठिन होगा।*

"हमारे पास संसार को देने के लिए कुछ चीज है, वह है कृष्णभावनामृत...। आप वैदिक ज्ञान के इस कोष की उपेक्षा क्यों करते हैं? और सारभूत ज्ञान *गीता* है। इसलिए यदि हम केवल *भगवद्गीता यथारूप* को समझने का प्रयत्न करें, तो हम तुरन्त ईश्वर-विज्ञान को समझ जायेंगे। और चूँकि हम ईश्वर के अभिन्न अंग हैं, इसलिए हम वास्तव में उससे एकाकार होने को व्याकुल हैं। यही हमारी खोज है। *आनन्दमयोऽभ्यासात्।* ईश्वर आनन्दमय हैं, और ईश्वर या कृष्ण का अभिन्न अंग होने के कारण हम भी आनन्दमय हैं। पर हम आनन्द की खोज एक भिन्न वातावरण में, भौतिक वातावरण में कर रहे हैं। इसलिए हम आकुल हैं। उपचार केवल यह है कि आप कृष्णभावनामृत स्वीकार कर लें और आप आनन्दमय हो जायेंगे। इसलिए हर भारतीय का यह कर्तव्य है कि वह इस विज्ञान को समझे।"

गिरिराज : *उस समय मैं सोच रहा था कि यदि प्रभुपाद अपने श्रोताओं की चाटुकारी करना या अपनी विचारधारा के साथ समझौता करना चाहते, तो वे लाखों अनुयायी बना लेते। लेकिन चूँकि वे इतनी निर्भयता और बलपूर्वक, बिना कोई समझौता किये धर्मोपदेश कर रहे थे, इसलिए उनके श्रोताओं में से बहुतों ने इसे पसन्द नहीं किया, क्योंकि यह उनके इन्द्रिय-सुख और भावनाओं के लिए एक चुनौती था।*

"यह एक विज्ञान है। यह कोई रूढ़िवादी, मक्कारी की चीज नहीं है। यह एक विज्ञान है और स्वयं भगवान् ने इसे कहा है और सभी आचार्यों ने इसे समझा है। कृष्ण कहते हैं, *आचार्योपसनम् :* हमें हर चीज को आचार्यों द्वारा समझना है। *आचार्यवान् पुरुषो वेद :* जो आचार्यों का पदानुगमन नहीं करता, वह कोई चीज समझ नहीं सकता। कृष्ण यह भी कहते हैं कि *तद्-विज्ञानार्थम्।* यह कठोपनिषद् में कहा है : *तद् विज्ञानार्थम् स गुरुम् एवाभिगच्छेत्।* कृष्ण कहते हैं, *तद् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।* अत: सभी स्थानों में वही, एक ही उपदेश है, आप उस व्यक्ति के पास जाइए, जो गुरु-परम्परा से आ रहा है—*एवं परम्परा-प्राप्तम्*—और *भगवद्गीता यथारूप* को समझने का प्रयत्न कीजिए। आपका

जीवन उदात्त बन जायेगा। आपका जीवन सफल हो जायेगा। यही हमारा मिशन है।"

गिरिराज : *सच तो यह है कि लोग प्रभुपाद और इस्कान के पीछे पागल थे। एक रात को हम ने सैन फ्रांसिस्को में रथयात्रा का चित्र दिखाया और लोग पागल हो उठे। दस हजार लोगों के सामने प्रभुपाद ने घोषणा की कि हम बम्बई में जगन्नाथ रथयात्रा निकालेंगे और हर एक उपस्थित व्यक्ति तालियाँ बजाने लगा और हर्ष-ध्वनि करने लगा।*

दिन-पर-दिन पंडाल का उत्सव सफल होता गया। बम्बई के सर्वप्रधान व्यक्ति आये और वे प्रभावित हो गये। सफेद-पोश व्यवसायी और उनकी सजी-धजी पत्नियाँ कीर्तन में सम्मिलित हुईं। बम्बई के नागरिकों में से सैकड़ों-हजारों लोगों के लिए क्रास मैदान में आना और पंडाल में शाम के कार्यक्रम में उपस्थित रहना आसान था। कुछ व्याख्यान सुनने और भाव-भक्ति के बारे में गहराई से जानने के इच्छुक थे, अन्य कुछ श्रीविग्रहों को देखने, प्रसाद लेने या कीर्तन का आनन्द लेने आते थे। जो भी हो, ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद और हरे कृष्ण-भक्तों ने नगर कें जीवन में ताजगी का योगदान किया। वह बम्बई के सार्वजनिक जीवन में सबसे बड़ी घटना थी।

एक शाम को प्रभुपाद ने हजारों लोगों के सामने वैदिक रीति से एक विवाह कराया और दीक्षा-संस्कार सम्पन्न कराया। विवाह वेगवान, जो स्वीडिश था और पद्मावती दासी, जो आस्ट्रेलियन थी, उनके बीच हुआ। उन दोनों ने दर्शक-मण्डली को पूरी तरह मोह लिया था—पद्मावती ने अपनी अलंकृत लाल साड़ी और भारतीय आभूषणों से, जिनमें उसकी नथुनी भी थी, और वेगवान ने अपनी सुन्दर सफेद धोती और कुरते से तथा साफ मुँडे हुए सिर से। उसी समय छह ब्रह्मचारियों ने दीक्षा भी ली।

गिरिराज : *दर्शन-मण्डली विस्मित हुई। पहले तो वे विदेशी भक्तों, विदेशी साधुओं को देखकर विस्मित हुए। उससे भी बढ़कर विस्मित वे तब हुए जब उन्होंने उन्हें दीक्षा लेते हुए देखा और उससे भी अधिक विस्मय उन्हें तब हुआ, जब उन्हें दस हजार लोगों के सामने विवाहित होते हुए देखा—यह दृश्य विस्मय-विमुग्ध कर देने वाला था। विवाह-संस्कार के मध्य जब श्रील प्रभुपाद ने लड़के और लड़की को पति-पत्नी बनाया, तो उन्होंने उल्लेख किया कि लड़का स्वीडन का था, जबकि लड़की आस्ट्रेलिया की थी। तब श्रील प्रभुपाद ने कहा, "यही वास्तविक संयुक्त राष्ट्र है।" और हर एक तालियाँ बजाने लगा। यह सबसे अधिक तड़क-भड़क और आश्चर्य से भरा कार्यक्रम था।*

उत्सव की आखिरी रात को भक्तजन राधा-कृष्ण के अर्चाविग्रहों को एक पालकी में रखकर सागर-तट पर ले गये। पचीस हजार की भीड़ के सामने प्रभुपाद ने व्याख्यान दिया और कीर्तन कराया।

अगले दिन, इंडियन एक्सप्रेस ने समाचार प्रकाशित किया—"**हरे कृष्ण उत्सव का**

समुचित समापन।"

यह दक्षिण बम्बई के क्रास मैदान में आयोजित ग्यारह दिवसीय उत्सव का शानदार, उपयुक्त समापन था, जिसने हजारों भक्तों को आकृष्ट किया।

राधा और कृष्ण की अलंकृत मूर्तियों को एक राजसी रथ पर रखकर शाम को उत्सव-स्थल से उन्हें एक जुलूस में गिरगाम रोड से होते हुए चौपाटी ले जाया गया। नगर की दर्जनों नाम-संकीर्तन मंडलियाँ हरे कृष्ण महामंत्र का भाव-विह्वल होकर उच्च स्वर में गायन करती हुई जुलूस के आगे-आगे चल रही थीं। उनके पीछे कृष्णकृपामूर्ति श्री ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद एक सुन्दर घोड़ा-गाड़ी में बैठे हुए कीर्तन कर रहे थे। सड़क के दोनों किनारों पर खड़ा जन-समूह हरे कृष्ण कीर्तन कर रहा था, जबकि भक्त सड़क पर रथ को खींच रहे थे।

चौपाटी पर चार-फुट-ऊँचे अर्चाविग्रहों को सुन्दर परिधानों में और रत्नों तथा मालाओं से अलंकृत करके उनके भव्य सिंहासन पर प्रदर्शित किया गया—यह सिंहासन हरे कृष्ण आन्दोलन को माधवबाग और मुम्बादेवी मन्दिरों की ओर से अनुदान के रूप में दिया गया।

उत्सव के बीच प्रभुपाद हर दिन सवेरे और शाम को *गीता* और *श्रीमद्भागवत* के विषयों पर बोलते थे। उनके तीस से अधिक विदेशी भक्त कीर्तन और आरती करते थे, और विशेष रूप से निर्मित पंडालों में चलचित्र दिखाते थे।

कुछ सप्ताह में रूस के प्रमुख नगरों में धर्मोपदेश के लिए यात्रा पर जाने के पहले, प्रभुपाद नागरिकों को अपना अन्तिम सन्देश देने वाले थे।

बम्बई-निवासियों को हरे कृष्ण उत्सव शीघ्र भूलने वाला नहीं था। और इस्कान के आजीवन सदस्यों को लिखे गये एक पत्र में प्रभुपाद ने वचन दिया कि यह तो केवल शुरूआत थी।

श्री राधा-कृष्ण के अनुग्रह से क्रास मैदान में हाल में आयोजित हमारा उत्सव अत्यन्त सफल माना गया है और बम्बई में भक्ति-भावना स्पष्ट तथा सक्रिय रूप में पुर्नजागरित हुई है। मैं आप लोगों को विशेष रूप से आशीर्वाद देता हूँ, जिन्होंने कृष्ण-सेवा में हमारा साथ दिया है।

जैसाकि आप कदाचित् जानते होंगे, मेरी योजना इस महाभाग्यशाली नगर में एक अनन्य अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावना प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने की है, जहाँ

विदेशों से आये हजारों व्यक्तियों को वैदिक जीवन-पद्धति की शिक्षा दी जा सके, और साथ ही भारतीय लड़कों, लड़कियों को भी विदेशों में प्रचार-कार्य करने के लिए प्रशिक्षण दिया जा सके। राधा और कृष्ण के महिमा-गान के लिए हम अध्यापन-कक्ष, कार्य-कक्ष, शयन-कक्ष, बृहत् पैमाने पर सार्वजनिक प्रसाद-वितरण के लिए पाक-शाला, व्याख्यान-हाल, पुस्तकालय और एक सुन्दर मन्दिर बनाएँगे।

हम इस महत्त्वपूर्ण आयोजन को क्रियान्वयन की ड्योढ़ी पर पहुँचा चुके हैं और इस दिशा में हुई प्रगति से आपको अवगत कराते हुए हम बहुत उत्साहित अनुभव कर रहे हैं।

आप मुझसे सहमत होंगे कि इस कार्य में आपका सक्रिय योगदान और सहभागिता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसलिए मैं आप से अनुनय करता हूँ कि आप अपने अतिशय व्यस्त जीवन के बावजूद, अपना अमूल्य समय निकालकर, अपना पूर्ण सहयोग हमें दें। सोमवार, २६ अप्रैल, १९७१ को ६.३० बजे शाम को ८९, भुलाभाई देसाई रोड स्थित 'आकाश गंगा' भवन की सातवीं मंजिल पर एक सभा करने का प्रस्ताव है, जिसमें अपनी लक्ष्य प्राप्ति के लिए हम अपनी संयुक्त शक्तियों के इस्तेमाल की योजनाओं पर विचार करके उन्हें अन्तिम रूप दे सकें। इससे समान विचार वाले कृष्ण-भक्तों को भी महान् अवसर मिलेगा कि वे अर्चाविग्रहों का दर्शन करें और आध्यात्मिक जीवन में शीघ्र प्रगति करने के लिए विचार-विमर्श करके एक-दूसरे को सुझाव दें।

मैं बहुत चाहता हूँ कि आप से फिर मिलूँ, इसलिए कृपया हमारी बैठक में 'जरूर जरूर' आयें। अपने लाखों-करोड़ों सुषुप्त भाइयों और बहिनों में कृष्णभावनामृत फैलाने के लिए हमें बहुत अधिक कार्य करना है।

इतने अधिक लोगों द्वारा इस्कान और संकीर्तन आन्दोलन को प्रामाणिक माना जाना भगवान् कृष्ण की शिक्षाओं की श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रस्तुति की शुद्धता का प्रमाण था। उनकी शिक्षाएँ साम्प्रदायिक नहीं थीं; वे संसार-भर के सब लोगों के लिए थीं। वे कृष्ण के प्रेम की, सारी मानव-जाति के लिए सार्वभौमिक सिद्धान्त की शिक्षा दे रहे थे। पंडाल में दिये गये भाषणों में उन्होंने दुख प्रकट किया था कि यद्यपि भारत धर्मनिष्ठ देश के रूप में विख्यात था, जहाँ के समाज में ईश्वरीय भावना परम्परा से व्याप्त मानी जाती थी, पर भारत के नेता नास्तिक और कम्यूनिस्ट होते जा रहे थे। देखना है कि भारत के लोग जो इन्द्रिय-सुख के लिए पागलपन से विकार-ग्रस्त हो चुके हैं और कृत्रिम धार्मिक शिक्षाओं की

गड़बड़ से किंकर्तव्यविमूढ़ हैं, अब भी वास्तविक चीज को पहचानकर उसे अपना सकते हैं या नहीं, लेकिन कम-से-कम बम्बई में पंडाल कार्यक्रम का बड़ा असर रहा—इतना संतोष प्रभुपाद को था।

कार्यक्रम वही था, जो उन्होंने अन्यत्र चलाया था : कीर्तन, नृत्य, प्रसाद-ग्रहण, अर्चाविग्रह की पूजा, कृष्ण के विषय में कथा-श्रवण आदि। यह भगवान् चैतन्य का कार्यक्रम था, जिसे विशेष परिस्थितियों के अनुसार थोड़ा अनुकूलित कर लिया गया था—पर वह फिर भी भगवान् चैतन्य का ही कार्यक्रम था। यह संकीर्तन ही आधुनिक समाज के रोग का एकमात्र सम्भव उपचार था। फिर भी लोग उस उपचार को स्वीकार करने में आनाकानी करते थे। इसलिए प्रभुपाद ने बोतल पर लेबल लगा दिया था। औषध अपरिवर्तित थी, किन्तु उन्होंने उसका लेबल आकर्षक कर दिया था : वैष्णव बने अमरीकी और योरोपीय युवाजनों को चित्रित करने वाली मनोरंजन, संगीत और प्रसाद-वितरण की समारोहपूर्ण संध्या।

लेबल लगाना आसान और धोखाधड़ी से रहित था। बम्बई का हर व्यक्ति जानता था कि हरे कृष्ण पंडाल का उत्सव उसकी ही वैदिक धरोहर की उपज थी। वे भलीभाँति अवगत थे कि हरे कृष्ण का नायक प्राचीन परम्परा का एक महान् आचार्य था। किन्तु उत्सव की प्रस्तुति उनके समक्ष इस आकर्षक और चमत्कारी ढंग से हुई कि वे उसकी पकड़ में बँध गये।

मधुद्विषा : *सचमुच कोई नहीं जानता था कि प्रभुपाद भारत से जा रहे थे। भारत में समस्त आन्दोलन के संचालक प्रभुपाद ही थे। वे ही उसकी शक्ति थे। हर चीज प्रभुपाद के कारण गतिशील थी। पाश्चात्य जगत में प्रभुपाद विचार दे देते थे और भक्त उसका विस्तार करते थे; प्रभुपाद देखभाल किया करते थे पर वे पश्चिम में कार्यक्रमों के सक्रिय अभिन्न अंग नहीं बनते थे। लेकिन भारत में उन्हें पूरी तरह सक्रिय रहना पड़ता था। वे हिसाब-किताब की जाँच करते थे। भारत के मामलों में उन्हें इतना अन्त:लीन रहना पड़ता था कि बम्बई के कोषाध्यक्ष ऋषि कुमार को अपना हिसाब दिखाने के लिए उनके पास हर दूसरे दिन आना पड़ता था। प्रभुपाद को हर चीज में आलिप्त रहना पड़ता था। भारत में सारा आन्दोलन उन पर निर्भर था। इस कारण काई यह नहीं सोचता था कि प्रभुपाद हम लोगों को सचमुच छोड़कर चले जायेंगे।* ●